जनता का राज्य

मनमोहन चौधरी

केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि
नई दिल्ली

केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि
राजघाट, नई दिल्ली
के लिए
मंत्री, सर्व सेवा संघ, वाराणसी
द्वारा प्रकाशित

प्रतियाँ : ३,०००
दिसम्बर, १९६६
मूल्य : २० पैसे

भूमिका

गांधी-जन्म-शताब्दी के निमित्त यह छोटी-सी पुस्तिका प्रकाशित की जा रही है।

सभी जानते हैं कि विनोबाजी भूदान-ग्रामदान-आन्दोलन के प्रवर्तक हैं। विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों में सर्वोदय-विचार को मूर्त रूप देना इस आन्दोलन का उद्देश्य है।

इस पुस्तिका के लेखक श्री मनमोहन चौधरी आज त्रिविध कार्यक्रम के नाम से ग्रामदान, खादी और शान्ति-सेना का जो आन्दोलन चल रहा है, उसके प्रमुख नेताओं में से एक हैं।

भारत की नवरचना में रुचि रखनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को इस बात की जानकारी अवश्य रहनी चाहिए कि त्रिविध कार्यक्रम के मूल तत्त्व क्या हैं और ग्रामदान में भाग लेनेवाले लाखों ग्रामीणों पर आज उसका क्या परिणाम हो रहा है। जो व्यक्ति इस कार्यक्रम में न केवल श्रद्धा रखता है, बल्कि सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष के नाते देशभर में इसे कार्यान्वित करने में तत्परता से लगा है, उस व्यक्ति से बढ़कर कौन होगा, जो इस विषय को ठीक से प्रस्तुत कर सके।

आशा है, पाठक इस पुस्तिका में वर्णित उन परिणामों पर खास ध्यान देंगे, जो न केवल उस गहन विचार पर, बल्कि ग्रामीण भारत के साथ

सीधा सम्पर्क रखनेवाले उन हजारों कार्यकर्ताओं के पुरुषार्थ पर भी प्रकाश डालते हैं।

पुस्तिका सरल और सुबोध शैली में लिखी गयी है तथा अनुभवों से भरी है। मुझे विश्वास है कि यह पुस्तिका प्रत्येक पाठक के लिए बोधप्रद सिद्ध होगी और ग्रामीण बन्धुओं की समस्याओं का और उनके समाधान का उन्हें परिचय करा सकेगी।

—रं० रा० दिवाकर

अध्यक्ष

गांधी स्मारक निधि

त्रिमूर्ति की उपासना

हमें त्रिविध कार्यक्रम चलाने हैं : एक कार्यक्रम है, सुलभ ग्रामदान का, दूसरा है, ग्रामाभिमुख खादी का और तीसरा है, शान्ति-सेना का। ये तीनों मिलकर एक कार्यक्रम है।

इनमें से जहाँ एक चीज है, वहाँ बाकी दो चीजें लानी हैं; जहाँ दो चीजें हैं, वहाँ तीसरी चीज लानी है; और जहाँ तीनो नहीं हैं, वहाँ तीनों लानी हैं।

लोगों के सामने चिन्तन के लिए कार्यक्रम त्रिविध रूप में रखा गया है। हरएक को खास चिन्तनिका होती है, इसलिए हरएक कार्यक्रम के बारे में अलग-अलग सोचना पड़ता है; लेकिन हमको अलग-अलग काम नहीं करना है। हमें तीनों को एकत्र करके काम करना है। त्रिमूर्ति की उपासना करनी है। त्रिमूर्ति में तीन अलग-अलग मूर्तियाँ नहीं हैं, एक ही है।

हमने जब जीवन-दान दिया था, तो उसके साथ हमने मंत्र दिया था। वह मंत्रपूर्वक दान था। उसमें कहा गया था : "भूदानमूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति के लिए मेरा जीवन-दान।" आज जो सुलभ ग्रामदान है, वह भूदान का विकास है; जो ग्रामाभिमुख खादी है, वह ग्रामोद्योग का सर्वोत्तम प्रतीक है; और शान्ति-सेना के द्वारा अहिंसक क्रान्ति आ सकती है।

इस कार्यक्रम का सबसे बड़ा गुण यह है कि यह संकट-मोचन का कार्यक्रम है—भारत के ही नहीं, विश्व के भी संकट-मोचन का। क्योंकि इससे लोक-शक्ति खड़ी होती है। यदि हम लोक-शक्ति खड़ी नहीं करेंगे, यदि गाँव के गरीब लोगों की जिम्मेदारी गाँववाले नहीं उठायेंगे और राज्य-शासन की अपेक्षा करते रहेंगे, तो स्वतन्त्रता का मूल्य, लोकतन्त्र का मूल्य और समाजवाद का मूल्य—तीनों मूल्य टिक नहीं पायेंगे। और फिर तो भारत ही सारे विश्व को आग लगाने का साधन सिद्ध हो सकता है।

—विनोबा

अनुक्रम

•

विनोबाजी पदयात्रा करते हुए
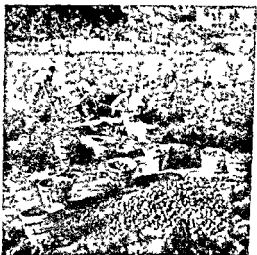
ग्रामदान के बाद पैदावार की बहार

कलके ये भूमिहीन आज के किसान

: १ :

स्वतन्त्रता के बाद

"आजाद हिन्दुस्तान में नयी दिल्ली के विशाल भवनों और उनके बगल में बसी हुई गरीब मजदूर-बस्तियों के टूटे-फूटे झोपड़ों के बीच जो दर्दनाक फर्क आज नजर आता है, वह एक दिन को भी नहीं टिकेगा।"

गांधीजी ने ये शब्द स्वराज्य मिलने के कई वर्ष पहले कहे थे। लेकिन अभी तक यह विषमता बनी हुई है, यही नहीं, बल्कि दिनोंदिन बढ़ती जा रही है।

स्वतंत्रता प्राप्त हुए २० वर्ष हो रहे हैं, फिर भी देश की अधिकांश जनता गरीबी में डूबी हुई है। भूख और बेकारी कायम है। लाखों लोग आज भी अज्ञान और रोग के शिकार हैं।

आजादी के पहले अनेक संकटों में भी लोग उठ खड़े हुए और आजादी के लिए लड़े—उनके मन में यह आशा थी कि स्वराज्य मिलते ही ये सारे दुःख दूर हो जायेंगे।

यह आशा बेमतलब नहीं थी। आज हम एक ऐसे असाधारण युग में जी रहे हैं, जिसमें ज्ञान की सीमा बहुत बढ़ गयी है। विज्ञान ने हमारे हाथ में बड़ी अद्‌भुत शक्ति दे दी है। चारों ओर आधुनिक विज्ञान के चमत्कार दिखाई दे रहे हैं। यदि इस शक्ति का सही लाभ उठाया जा सके, तो धरती पर स्वर्ग स्थापित हो सकता है। भूख, बेकारी और बीमारी हमेशा के लिए मिट सकती है। संसारभर के लोग सुखी और संतोषमय जीवन बिता सकते हैं।

लेकिन यदि आज की तरह उसका दुरुपयोग ही होता रहा, और युद्ध और शोषण में ही उसकी मदद ली जाती रही, तो उससे सारा संसार नष्ट

हो सकता है । और इसके लिए वह भयानक शक्ति अणुबम और हाइड्रोजन बम में इकट्ठी की जा रही है ।

गांधीजी जानते थे कि हिंसा और विज्ञान का मेल होता है तो वह निश्चित ही विश्व-संहार का कारण बनेगा । अगर अहिंसा के साथ विज्ञान का मेल होता है तो मानवता को शान्ति, मुक्ति और सुख प्राप्त हो सकते हैं ।

इसलिए भारत की स्वतन्त्रता के लिए उन्होंने सत्याग्रह जैसा अपूर्व साधन अपनाया और अहिंसक समाज की नींव डालने के लिए अठारह रचनात्मक कार्यक्रम प्रस्तुत किये । इसीको उन्होंने 'सर्वोदय' कहा ।

भारत के सामने आज अनेक बुनियादी समस्याएँ हैं । कुछ तो बीते समय के परिणामस्वरूप हैं । विदेशी राज के समय कई समस्याएँ पैदा की गयी थीं और बाकी स्वार्थ और शोषण के लिए विज्ञान का दुरुपयोग करने के कारण पैदा हुई हैं ।

भारत के पास एक भव्य सांस्कृतिक विरासत है । वह एक ऐसा विशाल सागर है, जिसमें असंख्य छोटे-बड़े प्रवाह आ मिलते हैं । उनके मधुर समन्वय से बहुत बड़ी शक्ति और समृद्धि पैदा हो सकती है, परन्तु वह समन्वय अभी हो नहीं पाया है । इसीलिए आज भी हमको भाषा, जाति, धर्म, वर्ग आदि भेदों की संकीर्णता और संघर्ष के दुःखद परिणाम भुगतने पड़ रहे हैं ।

सैकड़ों वर्षों से बिगड़ी हुई सामाजिक व्यवस्था के कारण यहाँ के लोगों में आत्मविश्वास और अभिक्रम की शक्ति नष्ट हो गयी थी । ऐसा विदेशी हुकूमत के कारण हुआ था । गांधीजी ने इस कमी को दूर करने की कोशिश की और काफी हद तक उन्हें सफलता भी मिली । फिर भी रोग अभी तक बना हुआ है । यही कारण है कि लोग हमेशा सरकार या किसी महापुरुष की राह देखते रहते हैं कि वे आकर हमारा सारा काम कर देंगे ।

आधुनिक उद्योग और व्यापार-व्यवस्था के कारण मुट्ठीभर लोगों के पास सम्पत्ति इकट्ठी हो गयी है । सरकारी मिल्कियत के अलावा जितनी भी औद्योगिक और व्यावसायिक सम्पत्ति है, उसके ४६ प्रतिशत की मालिकी केवल ७५ परिवारों के कब्जे में है ।

जमीन की मालिकी मे भी असमानता है। एक ओर लगभग २० प्रतिशत खेतिहर मजदूर ऐसे है, जिनका जमीन पर कोई हक नही है, और दूसरी ओर ७० प्रतिशत कृषि-योग्य भूमि अत्यल्प प्रतिशत परिवारो के नियन्त्रण में है।

पहले छोटे-छोटे उद्योग गाँव-गाँव में चलते थे। उनसे करोडो लोगो को रोजी मिलती थी। नये उद्योगो ने उन सब छोटे उद्योगो को खतम कर दिया। उनके बदले में दूसरा कोई धधा या रोजगार जुटाया नही गया। नतीजा यह हुआ कि लोग आलसी और काहिली का जीवन जीने को मजबूर हुए।

ये चन्द बुनियादी सवाल है, जो आज हमारे सामने है। अनाज की कमी, महँगाई, बेकारी, शोषण वगैरह अनेक समस्याएँ है, जो परेशान कर रही है। उन सबका हल तब तक सम्भव नही है, जब तक हम सबसे पहले किसानो का प्रश्न हाथ में न लें। सरकार की ओर से जितने भी प्रयत्न हुए, सबके सब असफल हुए, जनता पर उनका जरा भी परिणाम नही दिखाई देता। इन सब समस्याओ को हल करना शायद सरकार के बस की बात नही है। यही बात गाधीजी कहते थे और आज विनोबा भी कह रहे है।

सरकारो की शक्ति की तुलना में लोक-शक्ति की ताकत बहुत बडी है। जनता ही सरकार बनाती है या तोडती है, और क्रान्ति करके बडे-बडे परिवर्तन कर दिखाती है।

आज तक जितनी भी क्रान्तियाँ हुई है, उनमें अधिकतर क्रान्तियाँ हिंसक रही है। गाधीजी ने अपने सत्याग्रह-आन्दोलनो से यह दिखा दिया कि क्रान्ति अहिंसक भी होती है। उन्होने देश को आजाद होने में मदद की। वे सामाजिक और आर्थिक समस्याओ का समाधान भी शान्तिमय उपायों से करने में मदद करना चाहते थे, शान्तिमय सामाजिक क्रान्ति करने की उनकी तमन्ना थी। गाधीजी के बाद उस प्रयास को आगे बढाने का प्रयत्न विनोबाजी कर रहे है। स्वराज मिलने के बाद आज के नये सदर्भ में विनोबा-जी ने सर्वप्रथम भूमि-समस्या को हाथ में लिया और उसके समाधान के लिए

भूदान-आन्दोलन प्रारम्भ किया । इसीसे आगे चलकर ग्रामदान-आन्दोलन निकला ।

गाधीजी द्वारा चलाये गये कार्यक्रमो मे खादी और शान्ति-सेना प्रमुख कार्यक्रम थे । ये तीनो—ग्रामदान, खादी और शान्ति-सेना—मिलकर आज त्रिविध कार्यक्रम कहलाते है । गाधीजी के अन्य सब रचनात्मक कार्यक्रम इन्ही तीन में समाये हुए है, क्योकि जैसे विनोबाजी कहते हैं "माँ को निमत्रित किया, तो उसके साथ बच्चे भी आते ही हैं ।" यह 'त्रिविध कार्यक्रम' उन सब कार्यक्रमो के लिए द्वार खोल देता है और अनुकूल वातावरण निर्माण कर देता है ।

इस कार्यक्रम का लक्ष्य भारतीय समाज में ऐसा शान्तिमय परिवर्तन लाना है, जो क्रान्ति से किसी कदर कम नही है । हमारा विश्वास है कि यही एक कार्यक्रम है, जो लोगो में चारो ओर घिरी हुई समस्याओ का हल करने की शक्ति जगा सकेगा और वह दिन ला सकेगा कि जब 'महल के बगल में झोपडे न रहें ।' ●

: २ :

ग्रामदान

ग्रामदान-आन्दोलन भूदान का ही विकसित रूप है। भूदान अप्रैल १९५१ में आरम्भ हुआ था।

पहले हैदराबाद रियासत थी। उसका एक जिला है तेलगाना। वह भाग अब आंध्र-प्रदेश में मिल गया है। वहाँ उन दिनो किसानो के बीच भयकर अशान्ति भडक उठी थी। भारत के दूसरे हिस्सो की तरह वहाँ भी कृषि-योग्य भूमि का ज्यादा हिस्सा मुट्ठीभर लोगो के हाथो में था और मेहनतकश किसानो के हाथ में या तो बहुत कम था या बिलकुल ही नही था। बडे-बडे जमीदारो से जमीन छीनने का एक हिंसक आन्दोलन वहाँ छिडा हुआ था और भूमिहीन तथा गरीब लोगो को उसमें शामिल कर लिया गया था। वहाँ शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के लिए सेना भेजी गयी थी और उसके कारण बडे जोरो की खूँ-खराबी मची हुई थी।

गरीबो को न्याय दिलाने और शान्ति स्थापित करने का कोई उपाय खोजने के लिए विनोबाजी उस क्षेत्र में गये। वे गाँव-गाँव पैदल जाते थे, लोगो से मिलते थे और परिस्थिति का प्रत्यक्ष अध्ययन करते थे। एक गाँव की सभा में वहाँ के कुछ भूमिहीन किसानो ने उठकर कहा कि हमें यदि थोडी-सी जमीन मिल जाय तो हम आराम से गुजारा कर लें। तुरन्त रामचन्द्र रेड्डी नामक एक सज्जन ने उन गरीबो में बाँटने के लिए अपनी सौ एकड जमीन दान कर दी और वहीं से भूदान-आन्दोलन प्रारम्भ हुआ।

भूमि-समस्या हमारे देश की सबसे बडी और बुनियादी समस्याओ में से एक रही है। भूमि की मालिकी में इतनी बडी असमानता है कि लगभग

१६ प्रतिशत किसान एकदम भूमिहीन है, और इससे कुछ अधिक लोगो के पास बहुत कम भूमि है। बडे जमींदारो की सख्या अधिक है, लेकिन वे स्वय खेती नही करते। गरीब किसान उनसे बटाई पर या टीके पर जमीन लेते है। इससे शोषण, बेदखली और बेहद मालगुजारी आदि अन्यायो को बल मिलता है।

स्वराज्य के बहुत पहले ही कांग्रेस और दूसरे प्रगतिशील राजनैतिक पक्षो ने भूमि-सुधार की आवश्यकता महसूस की थी। स्वराज्य मिलते ही जमींदारी, मालगुजारी आदि बीच की व्यवस्था तो हटा दी गयी, लेकिन भूमि के अधिक समान वितरण का कोई खास प्रयत्न नही किया गया। कई राज्यो मे भू-स्वामित्व की अधिकतम सीमा(सीलिंग)का कानून लागू हुआ। चूँकि यह मर्यादा काफी बडी थी, इसलिए भूमिहीनो में बाँटने के लिए इसमें से बहुत कम जमीन निकल पायी। सीलिंग के कानून के कारण इतना ही हुआ कि बडे जमीदारो के बीच नये सिरे से भमि का पुर्नवितरण हुआ। पहले जमीन के बडे-बडे टुकडो की मालिकी थी, और अब सीलिंग की सीमा के अन्दर कई टुकडो में वही मालिकी बनी रही।

विदेशी तज्ञो ने भी कहा था कि भूमि-सुधार तुरन्त करना आवश्यक है। उन्होंने स्पष्ट सूचित किया था कि एकमात्र भूमि-सुधार से ही कृषि-उत्पादन बढाने की प्रेरणा जाग सकती है। यदि पर्याप्त मात्रा में अन्नो-त्पादन नहीं बढेगा तो पचवर्षीय योजनाएँ विफल हो जायँगी। फिर भी इस दिशा में कोई प्रयत्न नही किया गया और आज उसीका परिणाम देश को भुगतना पड रहा है।

भूदान भूमि-समस्या का हल करने का एक स्वतन्त्र और स्वैच्छिक प्रयास था। विनोबाजी जैसे जैसे तेलगाना से देशभर में पद यात्रा करते गये, वैसे-वैसे यह आन्दोलन सर्वत्र फैलता गया। कुछ ही वर्षों में भूदान के द्वारा लगभग ४० लाख एकड जमीन प्राप्त हुई। लेकिन इसमें से लगभग १० लाख एकड जमीन ४ लाख परिवारो में बाँटी जा सकी है। यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि सीलिंग का कानून लागू करके जो अतिरिक्त

जमीन प्राप्त की गयी, उससे यह जमीन कुछ ज्यादा ही है। (भू-प्राप्ति और वितरण का चार्ट अन्त में देखिये।)

भूदान-आन्दोलन के कारण देश में एक नयी आशा और नये उत्साह की लहर दौड गयी। उससे ग्रामीण क्षेत्र की अन्यान्य समस्याओं पर भी नयी रोशनी पडने लगी। देश मे और देहातो में जो पुरानी व्यवस्था चालू थी, वह समाज में फूट और भेद-भाव ही बढानेवाली थी। नये आदर्शों के अनुरूप उसकी पुनर्रचना करने की आवश्यकता थी, ताकि नया प्राण-सचार हो सके। भारत की सभ्यता का, राजनीति का और अर्थ-नीति का मुख्य आधार यहां के देहात हैं। भारत को जीवित रहना है तो उन देहातो की सस्कृति को छोडकर नही चल सकता।

वर्षों पहले से गाधीजी और देश के अन्य विचारक ग्रामो की नवरचना पर जोर देते रहे। अब ग्रामदान-आन्दोलन के कारण ग्रामो में चेतना जाग्रत करने का और ग्रामीण समस्याओ के समाधान की नयी दिशा का मार्ग खुल गया।

सन् १९५२ की बात है। उत्तर प्रदेश के हमीरपुर जिले में विनोबा-जी की पद-यात्रा चल रही थी। तब मगरौठ गाँव के निवासी उनके पास आये और अपनी सारी भूमि भूदान में दे दी। यही से ग्रामदान-आन्दोलन का जन्म हुआ और मगरौठ को भारत का प्रथम ग्रामदान होने का श्रेय मिला।

उस बात को अब १४ वर्ष हो गये। यह आन्दोलन देश के सभी भागो में दूर तक फैला और आज देशभर में (ता० ३१ अक्तूबर '६६ तक) २९,०९१ ग्रामदान हो गये हैं। इस बीच ग्रामदान के विचारो में कुछ सशोधन किया गया। सुलभ ग्रामदान के नाम से यही सशोधित रूप आज चल रहा है। हर तरह के लोगों के लिए वह आसान लगता है।

गाँवो में आमूल परिवर्तन करना ग्रामदान का लक्ष्य है। आज गाँव केवल कहनेभर को गाँव है। असल में वह कुछ झोंपडो के झुण्ड के सिवा कुछ नही है। अलग-अलग जातियो, सकीर्णताओं और प्रत्येक वर्गों के

गाँव में एक ग्रामसभा बनानी होगी है। गाँव के सभी बालिग स्त्री पुरुष उसके सदस्य होंगे। ग्रामसभा अपने अध्यक्ष और मत्री का चुनाव करेगी, और गाँव बडा होगा तो एक कार्यकारिणी समिति का भी गठन करेगी। गाँव का सारा व्यवहार ग्रामसभा करेगी, गाँव की आर्थिक प्रगति की योजना ग्रामसभा बनायेगी, लोगो की नैतिक उन्नति का खयाल ग्रामसभा रखेगी, अनाथ, विधवा, बीमार आदि के लिए जरूरी व्यवस्था भी ग्रामसभा ही करेगी। माता की तरह ग्रामसभा गाँव के प्रत्येक व्यक्ति का खयाल रखेगी। वही गाँव की वास्तविक सरकार है। यह सारा कारोबार चलाने के लिए ग्रामसभा की बैठक समय-समय पर हुआ करेगी।

कई राज्यो में ग्रामदान-कानून बन गया है। उसमें सौ या उससे अधिक आबादीवाले गाँव की ग्रामसभा को ग्राम-पचायत के सारे अधिकार देने की व्यवस्था है। इससे पचायती राज को बहुत बडा आधार मिलता है।

समस्त ग्रामीणो की सामूहिक इच्छा का एकमात्र प्रतिनिधित्व ग्राम सभा करेगी। गाँव के बाहर के सभी मामलो में गाँववालो की तरफ से ग्रामसभा ही व्यवहार करेगी। इससे होगा यह कि लोगो को साहूकार, व्यापारी, सरकार, कर्मचारी, पुलिस आदि के साथ अकेले-अकेले उलझना नही पडेगा। इस तरह से लोग परेशानी और बरबादी से छुटकारा पायेंगे, जिनसे वे आज तबाह है।

ग्रामसभा के सारे निर्णय सर्वसम्मति से होगे। सर्वसम्मति न हो सकती हो, तो सर्वानुमति से या भारी बहुमत से होगे। क्योकि भूमि-व्यवस्था, ग्रामकोष का विनियोग आदि बडे-बडे मामलो में सबका एक-राय होना जरूरी है। इसी तरह से ग्रामसभा को दूसरे-दूसरे नियम और कानून भी बनाने होगे।

हमारे गाँवो के लिए दलबन्दी एक महान् अभिशाप है। कई गावो में दो-दो, तीन-तीन दल बन गये है। उनके झगडे के कारण गाँववालो का जीना दूभर हो गया है। इस दलबन्दी में राजनैतिक पक्षो ने आग में

पुआल का काम किया है। आज के लोकतन्त्र मे बहुमत से निर्णय करने की जो पद्धति चालू है, उसने इस दलबन्दी को और प्रोत्साहन दिया है। इस दलबन्दी की जगह गांव को एकता में बांधे रखने का और गांव की शक्ति दिन-ब-दिन बढाने का काम सर्वानुमति से निर्णय करने की पद्धति अपनाने से ही सम्भव होगा। जहां-जहां भी यह पद्धति अपनायी गयी, वहां इसका अच्छा परिणाम देखने में आया है। इसके कारण लोगो में धीरज बढता है और दूसरों के दृष्टिकोण का आदर करने की वृत्ति पैदा होती है।

ग्रामकोष

प्रत्येक ग्रामदानी गांव को अपना एक ग्रामकोष बनाना होगा। उसमे गांव का प्रत्येक किसान अपनी उपज का ४०वां भाग देगा। जो खेती के बदले दूसरे धंधे करते है, उन्हें अपनी आय का ३०वां हिस्सा नकद देना होगा या उतना श्रम देना होगा। इस हिस्से का प्रमाण घटाने-बढाने का अधिकार ग्रामसभा को होगा। ग्रामकोष का विनियोग ग्रामसभा करेगी। कृषि-सुधार के लिए, ग्रामोद्योगो के लिए और दूसरे-दूसरे विकास-कार्यों के लिए उसका उपयोग हो सकता है। उस कोष से गांव के लोगो को मामूली ब्याज पर कर्ज भी दिया जा सकता है। बूढो, विधवाओ, अशक्त और अनाथ आदि को भी इस कोष से सहायता दी जा सकती है।

सरकार को अपना काम चलाने के लिए कर आदि के रूप में कुछ आय का जरिया भी खोजना पडता है। ग्रामकोष ग्राम-सरकार का खजाना है। लेकिन सरकार में और ग्रामसभा में एक फर्क है। सरकारें दबाव मे कर (टैक्स) वसूल करती है, परन्तु ग्रामकोष में लोग प्रेम से और स्वेच्छा से अपना हिस्सा देंगे।

आज की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था की नींव में संग्रह की वृत्ति है। इसमें हर कोई दूसरे का जरा भी ख्याल न करते हुए अपने लिए बटोरने की कोशिश करता है। नयी व्यवस्था—उसे चाहे समाजवाद

कहें या सर्वोदय—सभी सम्भव है, जब कि लोग आपस में बाँट-चूँटकर जीने लगें। उसके मूल सिद्धान्तो मे 'दान' एक प्रमुख तत्त्व रहेगा।

दान सतत जारी रहना चाहिए। प्रत्येक को न केवल एक बार अपनी भूमि का हिस्सा देना है, बल्कि हमेशा कुछ-न-कुछ देते ही रहना है। श्रमिक श्रम देगा, साहूकार धन देगा, शिक्षक और कर्मचारी अपना बौद्धिक श्रम दे सकता है। इस प्रकार ग्रामकोष एक नयी भावना और नयी दृष्टि का प्रतीक होगा।

जब इस प्रकार गाँव के कुल भूमिवानो के ७५ प्रतिशत लोग तथा कुल आबादी के ७५ प्रतिशत लोग उपर्युक्त चारो शर्तों को मान्य करके सकल्प-पत्र पर हस्ताक्षर करते है और गाँव की कुल जमीन के कम-से-कम ५१ प्रतिशत अश का स्वामित्व ग्रामसभा को सौंप दिया जाता है, तब वह गाँव ग्रामदान घोषित होता है।

इस पर और भी कई कानूनी कारंवाइयाँ करनी होती है। वह सब पूरी होने पर कानूनन् वह ग्रामदान मान्य होगा। यह सब करने-कराने के लिए सभी राज्यो में भूदान-बोर्ड या ग्रामदान-बोर्ड बने हुए है। ●

: ३ :

ग्रामदान, सरकार और योजना

स्वराज्य मिलने के बाद देश के व्यवस्थित विकास के लिए अरबों रुपये खर्च किये गये। अनेक बड़े-बड़े और महत्त्वपूर्ण कारखाने खोले गये, बड़े-बड़े बांध बांधे गये, हजारों मील लम्बी सड़कें बनायी गयीं और रेलवे लाइन बिछायी गयीं। असंख्य स्कूल खुले और अस्पताल शुरू हुए। तालाब और कुएँ खोदे गये। पिछले सौ सालों में जितना काम हुआ था, उससे कई गुना अधिक काम इन बीस सालों में हुआ। फिर भी देश की बुनियादी समस्याएँ ज्यों-की-त्यों बनी हुई हैं।

जो भी योजना बनायी गयी, वह सब सतही थी, ऊपर-ऊपर की थी। केवल शहरों को ध्यान में रखकर बनायी गयी थी। यद्यपि देश के ८५ प्रतिशत लोग देहातों में बसे हुए हैं, फिर भी उनकी ओर बहुत कम ध्यान दिया गया। विनोबाजी अक्सर कहते हैं कि पानी ऊपर से छन-छनकर नीचे जितना आता है, उतना ही नीचेवालों को मिल सकता है। किसी चीज पर पानी डालें तो वह छनकर नीचे तभी निकलेगा, जब ऊपरी सतह पूरा-पूरा पानी चूस चुकती है। उसी तरह हमारी योजना में भी हुआ यह कि ऊँचे स्तर के लोगों पर ही खूब सारा धन खर्च किया गया। योजना बनानेवालों को आशा थी कि छनकर कुछ तो नीचेवालों को मिल ही जायगा। लेकिन इस तरीके का परिणाम यह हुआ कि धनी अधिक धनी बनते गये, और गरीब जहाँ के तहाँ रह गये। बल्कि और गरीब बन गये।

ऊपरी स्तर के लोगों ने अपने साधारण व्यावहारिक अनुभव के बल पर योजनाओं का पूरा लाभ उठा लिया। जिनके लिए योजना थी, उनका

उस योजना में कोई दखल नही था, न योजनाओं को कार्यान्वित करने में उनका हाथ रहा। सब कुछ नौकरशाही के हाथ में था।

हमारे यहाँ अपने ढग का लोकतन्त्र है। जब तक चलता है, वह अच्छा ही है। लेकिन वह दूर तक जानेवाला नही है। पाँच वर्षों में एक बार लोग वोट देते है। फिर दूसरे चुनाव तक देश की योजना में और प्रशासन में उनका कोई हाथ नही रहता, वे या तो खाली आस लगाये बैठे रहे या बैठे-बैठे झुंझलाते रहे।

ग्रामो की उन्नति के लिए लाखो, करोडो रुपये खर्च किये गये, लेकिन बालू में पानी की तरह सारा धन न जाने कहाँ बिला गया। 'अपना-अपना भला देखो' वाला वही पुराना सिद्धान्त चालू रहा। इसलिए हर कोई इसी ताक में रहने लगा कि सरकारी सहायता का अधिक-से-अधिक लाभ उसे कैसे मिले।

इस स्थिति को सुधारने के प्रयत्न में पचायती राज की स्थापना हुई। लेकिन वह भी अपने उद्देश्य को सिद्ध करने में बहुत सफल नहीं हो सका।

इसलिए विनोबाजी के शब्दो में, यह वैसा ही हुआ, जैसे गाडी के आगे घोडा बाँधा जाय। जो सत्ता नयी दिल्ली, लखनऊ, बम्बई में केन्द्रित थी, उसके कुछ टुकडे गाँवो मे बाँट दिये गये, उस सत्ता पर गाँव के धनी और साधारण शिक्षित लोगो ने अपना कब्जा जमा लिया। और उसका उपयोग अपने ही कमनसीब भाइयो का शोषण करने में कर लिया। सम्पन्न लोगो के हाथ में गरीबो को कसने का जो शिकजा पहले से ही था, उसकी रही-सही कसर इस सत्ता ने पूरी कर दी।

सबसे पहले होना यह चाहिए था कि लोगो की दृष्टि और वातावरण को बदला जाता, ताकि शोषण का शिकजा ढीला पडता। तभी पचायती राज से लोगो का कल्याण हो सकता था।

स्वराज्य की बुनियाद में लाखो देशवासियो के त्याग का पुण्य था, इसीलिए उसमें कुछ पवित्रता आयी थी, शक्ति निर्माण हुई थी। पचायती राज भी तभी सच्चा सिद्ध होता, जब कि उसके पीछे त्याग की प्रेरणा होती।

आज उस त्याग और नये दृष्टिकोण का अवसर ग्रामदान से प्राप्त होता है।

भूमिवान् और भूमिहीन आपस में भूमि लेते देते हैं, तो दोनो के बीच सहयोग और मैत्री स्थापित होती है और उससे गाँव में सद्भावनापूर्ण नया और ताजा वातावरण निर्माण होता है। निजी मालिकी खतम होती है। अर्थात् व्यक्ति-व्यक्ति की अपार गरीबी खतम होती है।

कई राज्यो में ग्राम-पचायत का आकार बहुत बडा है। एक एक पचायत की जनसख्या तीन हजार या उससे भी अधिक है। उसके अन्दर १० से २० तक गाँव होते हैं। यह सच्ची ग्राम-पचायत नही हो सकती। किसी भी मामले पर विचार-विमर्श करने के लिए दस-बीस गाँवो के लोग कभी एकत्र हो नही सकते। हाँ, पचायत के नाम पर हर गाँव के एक-एक या दो-दो प्रतिनिधि एक साथ बैठ सकते हैं और राज्य-सरकार से प्राप्त सुविधाओ को आपस में बाँट ले सकते हैं। परिणामत गाँव के बाकी सब लोगो का पचायत के कामो से न कोई सम्बन्ध आता है, न उसकी उनको चिंता रहती है। ग्राम-पचायत भी पटना या लखनऊ की विधानसभा की तरह ही जनता से अलग पड जाती है।

सच्ची ग्राम-पचायत तो एक ही गाँव की बन सकती है, जहाँ के लोग एक साथ बैठ सकते हैं और सब मामलो का प्रबन्ध कर सकते हैं। तभी स्वराज्य का सम्बन्ध सीधे उनके जीवन से जुडेगा, उनके नित्य जीवन के आधार पर स्वराज्य खडा होगा और उनका अपना स्वराज्य होगा। लोग जब इस प्रकार ग्राम-जीवन के हर मामले में प्रत्यक्ष भाग लेने लगेंगे, तभी लोकतन्त्र वास्तविक होगा, असली होगा।

ग्रामदानी गाँव की ग्रामसभा से पचायती राज की ही नहीं, बल्कि स्वराज्य की ही वास्तविक नीव पडती है।

ग्रामदान का मतलब है, ग्राम-स्तर पर गाँव की वास्तविक योजना का प्रारम्भ। ग्रामसभा को गाँव में अनाज की पैदावार बढाने की योजना बनानी होगी, ताकि फल, दूध आदि सभी खाद्य पदार्थों में गाँव स्वावलम्बी

करने होंगे और वहाँ के कच्चे माल का उपयोग वहीं करने का प्रबन्ध करना होगा। खरीद-बिक्री का सगठन सहकार-पद्धति से करना होगा। ऐसी तालीम का प्रबन्ध करना होगा कि बच्चे उत्पादनक्षम और उपयोगी नागरिक बन जायें। स्वास्थ्य, सफाई, त्योहार, उत्सव, विवाह और आपसी मतभेद आदि जितने भी प्रसग है, ग्रामसभा को योजना बनाकर अपनी ओर से उन सबकी ठीक-ठीक व्यवस्था करनी होगी। नशा और अन्य व्यसनो पर पाबन्दी लगाने की बात भी सोचनी होगी।

आज गाँवो में स्वतन्त्रता नाममात्र की है और उनमे अभिक्रम-शक्ति तो है ही नही। सारी शक्ति ऊपर केन्द्रित हो गयी है। ग्रामदान से ग्राम-स्वराज्य की नीव पडती है, जिसमें गाँवो को अपने मामले में आवश्यक प्रबन्ध करने की अधिक-से-अधिक स्वतन्त्रता रहेगी और ऊपर का हस्तक्षेप कम-से-कम रहेगा। सरकार के पास भूमि-सम्बन्धी कागजातो में करोडो व्यक्तियो के नाम नही रहेंगे, बल्कि गाँव का एक ही नाम रहेगा। सरकारी कागजो में सिर्फ गाँव के नाम रहेंगे और यही लिखा रहेगा कि उस गाँव में इतनी जमीन है, और गाँव के नाम पर एक ही पट्टा रहेगा।

इसका प्रत्यक्ष लाभ यह होगा कि गाँव के लोगो को रेवेन्यू विभाग, रजिस्ट्रेशन विभाग और सिविल अदालतो से मुक्ति मिल जायगी। भूमि-सम्बन्धी सारे कागजात ग्रामसभा में रहेंगे। लोगो के कब्जे की जमीन में कोई रद्दोबदल होता है, तो वह वहाँ दर्ज होगा।

जो भी विवाद या झगडा खडा होगा, उसे गाँव में ही शान्ति से, समाधान-कारक ढग से निपटाने का प्रयत्न गाँववाले खुद करेंगे। गाँव से बाहर पुलिस या अदालत की शरण में नही जायेंगे। गाँव की सम्पत्ति की बरबादी का एक बडा जरिया मुकदमेबाजी है। हजारो गाँवो में, जहाँ ग्रामदान हो गये हैं, बहुत हद तक मुकदमेबाजी खतम हो गयी है। हर गाँव में कई शान्ति-सैनिक और शान्ति-सेवक रहेंगे और वे गाँव के अन्दर शान्ति कायम रखने और अपराध न होने देने का प्रयत्न करेंगे।

गाँव में विभिन्न ग्रामोद्योग खडे किये जायेंगे। इससे गाँव बडे-बडे व्यवसायो के फदे से छूट जायेंगे। इसके बारे में खादी-प्रकरण में विस्तार से चर्चा की गयी है।

आज लोगो को हर बात के लिए सरकार का मुँह ताकने की आदत पड गयी है। वे समझते है कि सरकार से जो कुछ मिलता है, सब एकदम मुफ्त दान मिलता है। लेकिन बात ऐसी नही है। सरकार जो भी खर्च करती है, उसका पाई-पाई लोगो से करो के रूप में वसूल कर लेती है। खासकर अप्रत्यक्ष कर के रूप में, जैसे कपडा, चीनी, माचिस आदि वस्तुओ की एक्साइज ड्यूटी आदि लगाकर। उस धन का बहुत बडा भाग उन सरकारी नौकरो पर खर्च होता है, जो ये कर वसूल करने और खर्च करने का काम करते हैं। सरकार हमसे यदि एक रुपया वसूल करती है, तो उसमें से लगभग ४० पैसे तो प्रशासन-व्यवस्था पर ही खर्च कर देती है। खर्च करनेवाले लोग उसमें से कितना हजम कर जाते हैं, इसका कोई ठिकाना नही है। ठीकेदार आदि का मुनाफा वगैरह बाद होने के बाद लोगो तक १०० पैसे में से केवल ३० पैसेभर का लाभ पहुँच पाता है।

इसके विपरीत, यदि ग्रामसभा कर वसूल करती है और खर्च करती है, तो रुपये मे कम-से-कम ९० पैसे का लाभ गाँववालो को मिल सकता है। इस तरह से सरकारी काम में होनेवाले भारी अपव्यय को रोकने की शक्ति एकमात्र ग्राम-स्वराज्य में ही है।

प्रखण्डदान

प्रखण्डदान का नया विचार देश को ग्राम-स्वराज्य की ओर एक कदम आगे ले जानेवाला है। सिचाई, छोटे उद्योग, माध्यमिक शिक्षा आदि कई विकास-कार्य हैं, जिनके आयोजन की इकाई गाँव से बडी होनी चाहिए। प्रखण्ड प्रशासन की भी एक प्रमुख इकाई है। जब प्रखण्ड के सारे गाँव, या लगभग सब गाँव ग्रामदान हो जाते हैं, तो प्रखण्ड-स्तर की पचायत-समिति

अथवा अचल-पचायत ग्राम-स्वराज्य के सिद्धान्तो के अनुसार काम कर सकेगी।

तब लोगो की वास्तविक आवश्यकता के आधार पर योजनाएँ बनायी जा सकेंगी और वह भी लोग स्वय बना सकेंगे, फिर उन्हें अमल में लाने के लिए आवश्यक एकता और उत्साह भी ग्रामदानी गाँव के लोगो में पैदा किया जा सकेगा।

इस समय तक (अक्तूबर '६६ के अन्त तक) ६७ प्रखण्डा का दान हो चुका है और शीघ्र ही सौ प्रखण्ड पूरे हो जायेंगे, ऐसा दीखता है। कई स्थानो पर जिला-दान का विचार भी लोगो के ध्यान मे आने लगा है और विहार के सर्वोदय-कार्यकर्ताओ ने पूरे बिहार प्रान्त को ही ग्रामदान मे लाने का सकल्प किया है।

हम इस बात की कल्पना कर सकते है, जब कि लाखो गाँव ग्रामदान में आ जायेंगे, तब उसका असर राज्य के प्रशासन पर और राष्ट्र की योजना पर पड़े बिना नही रहेगा। इससे दोनो का स्वरूप जड-मूल से बदल जायगा। उसमें दलित और पीडित बहुजन-समाज का हित प्रधान बनेगा। यही ग्रामदान का मुख्य लक्ष्य है।

: ४ :

ग्रामदान : प्रतिरक्षा साधन

अक्तूबर १९६२ की बात है। लद्दाख और नेफा क्षेत्र से चीनी सेनाएँ भारत में घुस आयी थी। सारा देश व्याकुल हो उठा था। उस समय विनोबाजी पश्चिम बंगाल में थे। ज्यों ही युद्ध की बात सुनी, फौरन् उन्होंने उद्घोष किया कि भारत की जनता की सुरक्षा का सर्वोत्तम उपाय एकमात्र 'ग्रामदान' है।

बहुतों को यह बड़ा अजीब और नया लगा। लेकिन विनोबाजी के लिए यह नयी बात नहीं थी। इससे पहले भी सन् १९५७ में मैसूर के पास एलवाल में ग्रामदान पर एक राष्ट्रीय परिषद् हुई थी। उसमें विनोबाजी ने इस बात पर जोर दिया था कि ग्रामदान को देशभर में शीघ्र फैलाना चाहिए, जिससे देश में विदेशी आक्रमण को रोकने की शक्ति पैदा हो सके।

उन्होंने कहा था "आज हमारी योजनाएँ यह मानकर बनायी गयी हैं कि दुनिया में शान्ति बनी रहेगी। लेकिन यदि कहीं कोई विस्फोट हो जाय, या भारत किसी संघर्ष में फँस जाय, तब क्या होगा? हमारा विदेशी व्यापार ठप हो जायगा, उसका प्रभाव आन्तरिक व्यापार-व्यवसाय पर भी पड़ेगा। हमारी सारी योजनाएँ धरी रह जायेंगी। संघर्ष या युद्ध के दिनों में हमारी पंचवर्षीय योजनाएँ नाकाम साबित होंगी।"

सन् १९६५ में भारत का पाकिस्तान से जो संघर्ष हुआ, वह बहुत साधारण था, फिर भी हमारी अर्थ-व्यवस्था पर उसका बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। उससे हमें इस बात की पूरी-पूरी पूर्वसूचना मिल गयी कि यदि बड़ा युद्ध छिड़ता है या विश्व-युद्ध होता है, तो उसका कैसा बुरा प्रभाव पड़ सकता है।

व्यापार-व्यवस्था टूटती है तो लोगो तक उनकी नित्योपयोगी चीजें पहुँचाना मुश्किल हो जाता है। इससे दु:ख बढेगा, असतोष फैलेगा और लोगो का नीति धर्म और सदाचार कलुषित हो जायगा। यदि गाँव और प्रखण्डो का ग्रामदान हो जाता है, तो सहज ही खाना, कपडा आदि नित्योपयोगी वस्तुओ के बारे मे वे आत्मनिर्भर हो जाते हैं, व्यापार और सचार-व्यवस्था के टूटने का असर उन पर बहुत ही कम पडेगा।

दूसरी बात यह कि आज देश में शान्ति कायम रखने के लिए बहुत बडी सख्या में पुलिस की आवश्यकता है। कई बार तो जब पुलिस की शक्ति कम पडती है, तब सेना बुलानी पडती है। ग्रामदान हो जाता है, तो गाँव के लोगों में पुलिस और सेना के बगैर ही, खुद अपने क्षेत्र की शान्ति बनाये रखने की सामर्थ्य आती है। इससे पुलिस और फौज की जरूरत नही रह जायगी और इनका उपयोग कही और हो सकेगा।

वास्तविक सुरक्षा तभी सम्भव है, जब न केवल पूरा राष्ट्र, बल्कि उसका प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक गाँव अन्न के मामले में स्वावलम्बी होगा। यह अत्यावश्यक है। विनोबाजी का आग्रह है कि हर गाँव में हमेशा दो वर्ष के लिए पर्याप्त अन्न का सग्रह रहना ही चाहिए। इससे न केवल गाँव को, बल्कि पूरे राष्ट्र की आर्थिक स्थिति सुदृढ हो जाती है। यह सब ग्रामदान से ही सम्भव हो सकता है।

आज भारत को चीन से डर है। चीन का भय खाली सीमावर्ती क्षेत्र में ही नही है। उसकी सम्भावना गाँव-गाँव में है। चीन अपनी सेना के बल पर सारे राष्ट्र को या उसके किसी बडे हिस्से को अपने कब्जे में नही ले सकता। चीनी नेताओ की ऐसी कोई योजना है भी नही। वे चाहते हैं कि भारत में साम्यवादी क्रान्ति हो, ताकि क्रान्ति के बाद स्थापित होनेवाली साम्यवादी सरकार चीन के मातहत रह सके।

सीमा प्रदेश में सेना के आक्रमण को रोका जा सकता है, लेकिन विचार के आक्रमण को नही रोका जा सकता। "जब तक देश में गरीबी है, भूख है, शोषण है, अन्याय है, तब तक जनता के मन में हिंसक क्रान्ति का आकर्षण

बना रहेगा।" विनोबाजी की भविष्यवाणी के अनुसार उस परिस्थिति में "गाँव-गाँव में चीन और अमरीका खड़े होंगे।"

चीन और अमरीका दुनिया को अपनी-अपनी मर्जी के अनुसार आकार देना चाहते हैं और उस आकार-भेद को लेकर ही उन दोनों के बीच आज जानलेवा दुश्मनी है। चीनी नेता सामाजिक और आर्थिक समता लाना चाहते हैं। इस समता के लाने में व्यक्ति की स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र मिट जायँ, तो उनको उसकी चिंता नहीं है। अमरीका के नेता व्यक्ति की स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र पर ज्यादा जोर देते हैं और उसमें आर्थिक समता न भी स्थापित हो और शोषण चालू ही रहे, तो भी वे चिंता नहीं करते। दोनों भारतीयों पर अपना असर डालने का प्रयत्न कर रहे हैं। जिस प्रकार लद्दाख के कई हजार वर्ग किलोमीटर भू-भाग पर चीन ने अपना कब्जा जमा रखा है, उसी प्रकार अमरीका हमारी अर्थनीति में कुछ महत्त्वपूर्ण कब्जा जमाये रखना चाहता है।

मनुष्य के भावी कल्याण की दृष्टि से आर्थिक समता, व्यक्ति-स्वातंत्र्य, लोकतन्त्र—ये सारे मूल्य बहुत महत्त्व के हैं। हम इन्हें सर्वथा परस्पर विरोधी नहीं मानते, जैसा आज अमरीका और चीन मानते हैं। यदि अहिंसक साधनों का उपयोग करते हैं, तो तीनों की स्थापना एक साथ हो सकती है। ग्रामदान गाँव का हित-विरोध व्यावहारिक रूप में और सद्भावनापूर्वक मिटा देता है, इसके कारण अमरीका या चीन के बारे में जो भी पूर्वधारणा रही हो, वह सब एक ही झटके से उड़ जाती है।

इस प्रकार ग्रामदान वास्तव में प्रतिरक्षा का एक प्रमुख साधन है। विनोबाजी ने एक जगह कहा था : "हमारा यह दावा नहीं है कि एकमात्र ग्रामदान ही देश को बचानेवाला है। देश की रक्षा के लिए और भी कई चीजें आवश्यक हैं। फिर भी दावे से हम इतना तो कहते ही हैं कि यदि ग्रामदान का आधार न दिया जाय, तो वे दूसरे सारे साधन कुछ भी काम नहीं दे सकेंगे।"

●

: ५ :

कुछ समस्याएँ

हमारे गाँवो में तीन प्रकार के लोग रहते हैं १ भू-स्वामी, २ गरीब किसान और मजदूर, और ३ व्यापारी और साहूकार। गाँव के सामूहिक हित की दृष्टि से तीनो प्रकार के लोगो के पास कुछ-न-कुछ उपयोगी सम्पत्ति है। भूमि-स्वामियो के पास भूमि है, मजदूरो के पास श्रम है, व्यापारी और साहूकारो के पास धन है, व्यवस्था-शक्ति है। ये सभी चीजें गाँव के विकास और कल्याण के लिए आवश्यक हैं। इसलिए ग्रामदान में इन तीनो को मिलाने का प्रयत्न किया जाता है।

कुछ बडे जमीदार ग्रामदान में शामिल होने से डरते हैं। वे अपने बच्चो की पढाई, लडकियो के विवाह आदि कई बातो का बन्धन अपने ऊपर महसूस करते हैं और इसीलिए अपनी कीमती जमीन वे छोड नही पाते है। उनका यह भय दूर करने के लिए ही ग्रामदान को 'सुलभ' बनाया गया। इस सुलभ ग्रामदान में उनको गरीबो के लिए अपनी भूमि का अत्यल्प भाग, यानी बीसवाँ हिस्सा देना होता है। ग्रामदान के महान् लक्ष्य की सिद्धि में यह उनका करुणाप्रेरित छोटा-सा त्याग है।

मजदूरो का भय दूसरी तरह का है। कइयो को लगता है कि मजदूरो से कुछ भी काम लेना है तो उनको गरीब और अज्ञानी बने रहना चाहिए और जमीदारो के पैरो के नीचे दबे ही रहना चाहिए। यह धारणा सदियो से चली आयी है। एक जमाने में गुलामी (दास-प्रथा) का रिवाज था। लोग मानते थे कि मजदूरो को पशु की तरह रखें और उनके साथ जानवर के समान व्यवहार करें, तभी वे काम करेंगे। लेकिन अब वे सारे मूढ विचार बदल गये हैं। किसी भी सम्पन्न और समृद्ध राष्ट्र में जाकर देखिये, लोग

श्रमिकों से बराबरी का व्यवहार करते हैं। वहाँ के श्रमिकों का रहन-सहन उत्कृष्ट है, वे काफी पढ़े-लिखे होते हैं। आज जो नये-नये यंत्र बने हुए हैं, उनको तो शिक्षित श्रमिक ही चला सकते हैं, जिनसे व्यापक रूप से उत्पादन बढ़ाने में मदद मिलती है।

इन राष्ट्रों के पूँजीपति भी अब समझने लगे हैं कि श्रमिकों को यदि सुखी और संतुष्ट रखा जाय और उनके साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार किया जाय, तो वे ज्यादा उत्पादन करते हैं और अच्छा माल तैयार करते हैं। अब पुराने सारे विचारों को छोड़ने का समय आ गया है।

श्रमिकों की ओर पूरा ध्यान देना चाहिए और उन्हें अपने परिवार के ही सदस्य की तरह समझना चाहिए। गाँव के दूसरे लोगों की तरह ही उन्हें भी अच्छी शिक्षा मिलनी चाहिए, उन्हें सुखी और सम्पन्न बनाना चाहिए। इससे गाँव के सब लोगों को नयी वैज्ञानिक पद्धतियों का लाभ मिल सकेगा और उत्पादन कई गुना अधिक बढ़ाया जा सकेगा। जमींदार अपनी पुरानी धारणाओं से चिपके रहेंगे तो खुद भी कई अच्छी बातों से वंचित रह जायेंगे, जनसाधारण की प्रगति को तो रोकेंगे ही।

व्यापारी और साहूकार भी अक्सर ग्रामदान से डरते हैं। साहूकारों को डर है कि कर्ज में उन्होंने जो धन दिया है, वह कहीं डूब न जाय! उनको लगता है कि ग्रामदान में जमीन पर व्यक्तिगत मालिकाना हक नहीं रह जाता है, और किसान जमीन बेच नहीं सकेंगे या रेहन नहीं रख सकेंगे, तो उनका कर्जा वापस अदा कैसे होगा? लेकिन दरअसल ग्रामदान से उनका पैसा अधिक सुरक्षित होता है। कर्ज की सारी लेन-देन ग्रामसभा के मार्फत हुआ करेगी। कर्ज वसूल करने का भार ग्रामसभा पर रहता है। अतएव यह आसानी से समझ में आने जैसी बात है कि व्यक्ति-व्यक्ति के साथ व्यवहार करने की अपेक्षा यह स्थिति साहूकारों के लिए अधिक सुविधा-जनक है।

कृषि, व्यापार, या दूकानदारी आदि कोई-न-कोई दूसरा धधा करना चाहिए। आज जिनके पास कोई धन्धा नही है, उन्हें कोई-न-कोई धन्धा अपना लेना चाहिए। उधार दें, तो बिना ब्याज के देना चाहिए। हाँ, हिसाब-किताब वगैरह या जो कुछ नुक्सान वगैरह होता है, उस दृष्टि से मामूली खर्च ले सकते हैं।

व्यापारियो को डर है कि ग्रामदान में उनका मुनाफा छिन जायगा। लेकिन ग्रामदान से तो उत्पादन बढता है, और जैसे-जैसे उत्पादन बढता है, वैसे-वैसे रुपये-पैसे का व्यवहार भी बढता है; इससे अतिरिक्त मुनाफा लिये बिना भी काफी धन बचने की गुजाइश रहती है। व्यापारी और साहूकारो को ग्रामदान में शामिल होना चाहिए और ग्रामसभा, ग्रामकोष, सहकारी समितियाँ, ग्राम-भण्डार आदि स्थानीय सस्थाओ के सचालन में और उनके विकास में अपनी बुद्धि, प्रतिभा और अनुभव का लाभ देना चाहिए।

कई जमीदार तो गाँव से बाहर रहते हैं। उनको भी ग्रामदान में शामिल होना चाहिए। ग्रामदान-कानून में इसकी अनुमति है।

अकसर सवाल उठता है कि शादी-ब्याह मे, नुक्ता, श्राद्ध आदि में कैसे क्या होगा? जमीन बेचें नही, रेहन नही रखें, तो हर कोई यह सारा भार कैसे उठा सकेगा? लेकिन हमें समझ लेना चाहिए कि जमीन बेचकर या रेहन रखकर कर्ज लेना आत्महत्या के समान है। विनोबाजी ने एक बार एक सुन्दर उपमा दी थी। कोई आदमी एक पहाड पर गया था। रात हो गयी। जोरो से ठण्ड पडने लगी। उसके पास एक ही कम्बल था। उससे ठण्ड से पूरा बचाव नही हो पाता था। उस समय उसे एक बढिया विचार सूझा। उसने उस कम्बल में आग लगा दी। सेंकने बैठ गया। काफी गरमी मिली। बडा अच्छा लगा। लेकिन वह सुख चन्द मिनट ही मिल सका। ज्यो ही कम्बल जलकर राख बन गया, तब पहले से ज्यादा ठण्ड लगने लगी और वह ठिठुरकर मर गया।

शादी, श्राद्ध वगैरह के लिए जमीन बेचना कम्बल जलाकर गर्मी

प्राप्त करने जैसा ही काम है। इससे अगली पीढ़ी को भी जीविका के साधन से वंचित होना पड़ता है। इसलिए ऐसे खर्चों के लिए कोई दूसरा ही जरिया खोजना होगा। फिर ये खर्च भी धीरे-धीरे घटाने होंगे। हमारे जैसे गरीब देश पर ये सारे बोझ बहुत अनुचित हैं। इस बारे में ग्रामदानी गाँव मिलकर विचार कर सकते हैं और ऐसे खर्च कम करने का निर्णय ले सकते हैं। सामूहिक रूप से कई शादियाँ हो सकती हैं। इससे खर्च बचेगा और विशेष आनन्द भी मिलेगा।

कुछ लोगों की कल्पना है कि ग्रामदान होने के बाद सारी जमीन गाँव की हो जाने से सामूहिक खेती ही करनी पड़ेगी, और सारे किसान मिल-मजदूरों की तरह हो जायेंगे। इसी कारण वे ग्रामदान को नापसंद करते हैं। यह भ्रम निराधार है। हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि ग्रामदानी गाँवों में जमीन हरएक परिवार में बाँटी जाती है। जबरदस्ती सामूहिक खेती करने की बात नहीं है। ग्रामसभा में सब मिलकर चर्चा करते हैं, सर्वसम्मति से या सर्वानुमति से निर्णय लेते हैं और इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति की स्वतन्त्रता कायम रहती है।

वहाँ, यह हो सकता है कि किसान खुद ही मिल-जुलकर खेती करना चाहें, उसमें उनको लाभ दिखता हो और व्यक्तिगत खेती छोड़कर सामूहिक खेती करने का तय करें। वैसा वे कर सकते हैं।

आर्थिक समता का सवाल बहुत प्रमुख है। जमीन का केवल बीसवाँ हिस्सा बँटता है, तो फिर समानता कैसे होगी? आज तक जो भयंकर विषमता रही है, ग्रामदान के बाद भी वह वैसी ही बनी रहेगी। समता एकदम सधनेवाली चीज नहीं है। वह तो अपने ढंग से आयेगी। इसमें समय लगता है। विनोबाजी इसे पर्वतारोहण की उपमा देते हैं। ऐसे भी निर्भीक पर्वतारोही होते हैं, जो खड़ी चट्टान और पत्थरों पर सीधे चढ़कर चोटी पर पहुँच सकते हैं। लेकिन ऐसे लोग इने गिने ही होते हैं। और दूसरी ओर इंजीनियर नीचे से चोटी तक सड़क बनाते हैं, जिस पर बच्चे से लेकर बूढ़े तक सब आराम से चलते-चलते चोटी पर पहुँच सकते हैं। यह

रास्ता लम्बा होता है, इसमें जरूर समय कुछ अधिक लगता है, लेकिन यह रास्ता सबके लिए आसान है, सुलभ है। ग्रामदान इसी सड़क के समान है, जो सबको आसानी से चोटी पर पहुँचाती है। इस पर हर कोई चल सकता है और चलते-चलते निश्चित ही मंजिल पर पहुँच सकता है।

उसमें पहला काम है, भूमि के एक छोटे हिस्से का वितरण। सुख-दुःख से एक-दूसरे से कंधा मिलाकर, परस्पर हाथ बँटाते हुए जीने का आरम्भ यहाँ से होता है। उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्न भी किये जायेंगे। जिनके पास बहुत कम जमीन रह जायगी, उनको दूसरे-दूसरे उद्योग भी दिये जायेंगे। इससे उनकी आमदनी बढ़ेगी। बाकी किसान भी अपनी भूमि से अधिकाधिक उपज लेने की कोशिश करेंगे और धीरे-धीरे इस प्रकार कुछ ही वर्षों में अपनी भूमि में कुछ अन्य लोगों को शामिल कर लेने लायक उनकी स्थिति हो जायगी और वे ऐसा करना चाहेंगे भी। यह प्रक्रिया बराबर चलती रहेगी।

विनोबाजी इस बात की ओर बराबर ध्यान खींचते रहते हैं कि आनेवाली पीढ़ी आर्थिक समता और सामाजिक न्याय के बारे में हमसे अधिक तीव्रता से सोचनेवाली है कम नहीं। हमारे इस काम को लोग अधिक वेग और उत्साह से आगे बढ़ानेवाले हैं। समय की गति हमेशा आगे की ओर रहती है, पीछे मुड़ती नहीं है। इसलिए जल्दी या धीरे यह उद्देश्य प्राप्त होकर रहनेवाला है, क्योंकि ऐतिहासिक परिवर्तन की गति दिन-ब-दिन तेज होती जा रही है।

: ६ :

ग्रामदान-आन्दोलन की स्थिति

ग्रामदान-आन्दोलन का आरम्भ मगरौठ से हुआ। तब वह बहुत छोटा था। बाद में वह बडी तेजी से फैला। सन् १९५५ तक उडीसा में लगभग एक हजार ग्रामदान हो गये थे। सन् १९५८ तक आध्र, मद्रास, केरल और महाराष्ट्र में सैकडो ग्रामदान हुए थे। इस समय कश्मीर और नागालैण्ड को छोडकर सभी प्रदेशो में ग्रामदान हुए है।

सन् १९५७ में मैसूर राज्य के एलवाल नामक स्थान में एक बडी ग्रामदान-परिषद् हुई थी। उसमें तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, प्रधानमत्री प० जवाहरलाल नेहरू तथा विनोबाजी के अलावा काग्रेस, प्रजा-सोशलिस्ट पार्टी और कम्युनिस्ट पार्टी आदि प्रमुख राजनैतिक पक्षो के नेता भी सम्मिलित हुए थे।

परिषद् दो दिन तक चली और उसमें सर्वसम्मति से एक निवेदन स्वीकृत किया गया, जिसमें ग्रामदान-आन्दोलन को सब पक्षो ने अपना समर्थन व्यक्त किया था। निवेदन में कहा गया है कि ग्रामदान-आन्दोलन भू-समस्या का सर्वोत्कृष्ट समाधान है और इससे देश की नैतिक तथा भौतिक उन्नति में सहायता मिलेगी। उसने आवाहन किया था कि ग्रामदान-आन्दोलन और सामुदायिक विकास-योजना का घनिष्ठ सहयोग होना चाहिए।

सन् १९६१ मे विनोबाजी असम गये। वहाँ डेढ साल भ्रमण किया। उस अरसे में ९०० से कुछ अधिक ग्रामदान वहाँ मिले। वे असम से इधर आये ही थे कि भारत की सीमा पर चीन का आक्रमण हो गया। उस सघर्ष के सदर्भ में विनोबाजी प्रतिरक्षा के एक अचूक साधन के रूप में ग्रामदान

का महत्त्व जोरो से समझाने लगे और ग्रामदान की शर्तों में कुछ सशोधन कर दिया, ताकि वह सबके लिए सुलभ हो सके ।

इस नये आधार पर बगाल में तथा अन्य प्रदेशो में भी सैकडो ग्रामदान होने लगे । मगरौठ एक साधारण गाँव था, लेकिन उडीसा और महाराष्ट्र के अधिकतर ग्रामदान आदिवासी क्षेत्र के थे । मद्रास में जो ग्रामदान हुए, वे आदिवासी लोगो के गाँव नही थे, बल्कि औसत स्तर के थे । असम के ग्रामदानी गाँव भी गैर-आदिवासी साधारण गाँव थे । इसके बाद पढ़े-लिखे लोगो के अच्छे स्तर के बडे-बडे गाँव भी ग्रामदान में मिलने लगे । देश के किसी भी स्थान का कोई भी गाँव ग्रामदान हो सकता है, इसकी सम्भावना स्पष्ट होने लगी ।

दिसम्बर '६३ में रायपुर में सर्वोदय-सम्मेलन हुआ । उसमें ग्रामदान, खादी और शान्ति-सेना का 'त्रिविध कार्यक्रम' स्वीकृत हुआ । यह माना गया कि सन् १९६९ में गाधीजी की जन्म-शताब्दी तक त्रिविध कार्यक्रम के द्वारा ऐसा प्रयत्न किया जाय कि भारत के सारे गाँवो में 'ग्राम-स्वराज्य' की नीव पड जाय, और यही गाधीजी के प्रति वास्तविक श्रद्धाजलि होगी ।

गोपुरी (वर्धा) में सर्व सेवा सघ के अधिवेशन के अवसर पर मई १९६५ में विनोबाजी ने बिहार में ग्रामदान-तूफान खडा करने की अपील की । बिहार के कार्यकर्ताओ से उन्होने कहा कि यदि वे छह महीने में दस हजार ग्रामदान प्राप्त करने का सकल्प करते है, तो वे उनकी मदद में बिहार आ सकते है । कार्यकर्ताओ ने स्वीकार किया और विनोबाजी ने ११ सितम्बर '६५ को बिहार में प्रवेश किया । बाद में अवधि कुछ बढानी पडी और जुलाई '६६ के अन्त तक वहाँ ९,२०० ग्रामदान हो चुके थे ।

तूफान-आन्दोलन देशभर में फैला । जोरो से ग्रामदान होने लगे । ७,००० की जगह जुलाई '६६ के अन्त तक २३,००० ग्रामदान हो गये ।

अप्रैल १९६६ में बलिया (उ० प्र०) में सर्वोदय-सम्मेलन हुआ । उसमें प्रस्ताव स्वीकृत हुआ कि सन् १९६६ के अन्त तक देशभर में ५० हजार ग्रामदान प्राप्त किये जायें । श्री जयप्रकाशजी ने अपना विश्वास

दिया है और कई जगह तो गैरकानूनी ढग से कर्मचारियो ने जो पैसा लिया था, वह वापस वसूल कर लिया गया है ।

खासकर पिछडे हुए इलाको मे वहाँ की अर्थ-व्यवस्था पर साहूकारो की बडी गहरी पकड होती है । वे सामान्यतया कर्ज पर ५० से १५० प्रतिशत तक ब्याज वसूल कर लेते हैं । शुरू शुरू मे साहूकारो ने ग्रामदान का विरोध किया, अपने प्रभाव का उपयोग करके उसे तोडने का भी प्रयत्न किया । कई जगह तो वे सफल भी हुए, लेकिन अधिकतर गाँवो में ग्रामीण झुके नही, डटे रहे । उन्होने अपना ग्रामकोष बना लिया और इससे उनका आधार मजबूत हुआ । फिर अन्तत साहूकारो को ढीला होना पडा । उन्होने ब्याज की दर घटा दी और गाँववालो के साथ सहयोग करने लगे ।

ग्रामदान के बाद निर्माण-कार्य भी शुरू किया गया है । गाधी स्मारक निधि, कस्तूरबा स्मारक निधि, खादी ग्रामोद्योग कमीशन, असख्य खादी-ग्रामोद्योग-सस्थाएँ, हरिजन सेवक सघ आदि जितनी सस्थाएँ गांधीजी के रचनात्मक कामो में लगी हुई हैं, वे सब ग्रामदानी क्षेत्रो में अपनी सेवाएँ देने लगी हैं, और कई ग्राम समूहो में अपना केन्द्र चला रही हैं । इन केन्द्रो में वे अपनी-अपनी प्रवृत्तियाँ तो चला ही रही हैं और साथ ही अन्य विकास-कार्यक्रमो में भी रुचि ले रही हैं । खादी-सस्थाएँ खादी कार्य कर रही हैं, और कस्तूरबा निधि गाँव की बहनो और बच्चो की ओर विशेष ध्यान दे रही हैं ।

विकास की विविध प्रवृत्तियाँ चलाने के लिए स्वय ग्रामदानी गाँव के लोगो ने अपने सगठन बनाये हैं । मद्रास में 'ग्राम-स्वराज्य सहकारी-समितियाँ' बनी हैं, और असम तथा उडीसा में 'ग्रामदान-सघ' बने हैं । ये सस्थाएँ सामान्यतया प्रखण्ड स्तर की हैं और ग्रामदानी गाँवो के प्रतिनिधि उनके सदस्य हैं । ये सघ सोसाइटी-रजिस्ट्रेशन एक्ट के अन्तर्गत रजिस्टर कराये जाते हैं । दूसरे राज्यो में भी इस प्रकार के सघो का गठन हो रहा है । मद्रास में इन सघो ने खेती की पैदावार बढाने और बिक्री का सगठन करने में बडा उपयोगी काम किया है ।

गुजरात में सहकारी-समितियाँ काफी यशस्वी रही हैं। वहाँ अनाज आदि सभी कृषि-उत्पादन की बिक्री का पूरा भार उन समितियों ने उठा लिया है, जिससे किसानों को बड़ा लाभ मिल रहा है। कोरापुट में छोटे प्रमाण में यह प्रयत्न हुआ है।

एलवाल परिषद् में—सन् १९५७ में—यह निवेदन स्वीकृत हुआ था कि भारत-सरकार की सामूहिक विकास-योजना और ग्रामदान-आन्दोलन में घनिष्ठ सहयोग होना चाहिए। हाल में सर्व सेवा संघ और सामुदायिक विकास-मंत्रालय के सहयोग से २५ सघन क्षेत्रों की एक योजना हाथ में ली गयी है। प्रत्येक क्षेत्र में सटे हुए कई ग्रामदान हैं, कुल जनसंख्या लगभग ५,००० है और कुल भूमि भी लगभग ५,००० एकड़ है। योजना का मुख्य लक्ष्य कृषि, मुर्गी-पालन तथा पशु-पालन-उद्योगों में उत्पादन बढ़ाना है।

खादी-ग्रामोद्योग कमीशन ने अपनी यही नीति निर्धारित कर ली है कि खादी-कार्य को बढ़ाने का काम आगे से केवल ग्रामदानी क्षेत्रों में ही किया जायगा।

इंग्लैण्ड में 'वार ऑन वाण्ट' नामक संस्था है। पिछड़े राष्ट्रों के गाँवों के विकास के लिए सहायता देना ही उसका एकमात्र उद्देश्य है। इस संस्था ने ग्रामदान-आन्दोलन की ओर स्वयं दिलचस्पी ली और ४०० गाँवों को २४ लाख रुपये की सहायता दी है। औसत एक एक गाँव को ६-६ हजार रुपये मिले हैं। इसके अलावा ग्रामदानी गाँवों में कृषि की सुधरी पद्धति दाखिल करने आदि अन्य कार्यक्रमों के लिए और भी कुछ सहायता दे रही है। 'वार ऑन वाण्ट' की धनराशि का उपयोग सिंचाई के साधनों में, सहकारी समितियाँ और छोटे उद्योगों को चालू करने जैसे कामों में किया जा रहा है।

भारत सरकार ने ग्रामदानी गाँवों को अनुदान और ऋण के रूप में देने के लिए एक करोड़ की रकम अलग से स्वीकृत कर रखी है। अभी तक वह धन काम में लेना सम्भव नहीं हो सका है। कई राज्यों में प्रादेशिक सरकारें भी काफी मददगार रही हैं। कुछ राज्यों में ग्रामदान-कानून बने

है और दूसरे राज्यों में विधानसभा के सामने बिल लाने का प्रयत्न चल रहा है। मद्रास-सरकार ने एक भारी रकम ग्रामदानी गाँवों को ऋण के रूप में देने के लिए निश्चित कर रखी है, जो दूसरा कोई जरिया न रह जाने पर प्राप्त हो सकती है। उड़ीसा-सरकार ने ५०० ग्रामदानी गाँवों के कृषि-सुधार के काम के लिए सहायता के रूप में अब तक २५ लाख रुपये दिये हैं।

यद्यपि ये सारी सहायताएँ काफी बड़ी है, फिर भी ग्रामदानी गाँवों की आवश्यकता को देखते हुए यह बहुत ही कम है, अपर्याप्त है। लाखों की सख्या में जब ग्रामदान हो जाते है, तब क्या राज्य-सरकार की, क्या भारत-सरकार की, सब योजनाएँ जड-मूल से बदलनी होगी, ताकि ग्रामीण क्षेत्र को सर्वाधिक प्राथमिकता मिल सके। फिर भी गाँवों की अपनी साधन सामग्री का पूरा उपयोग करके गाँव की शक्ति खडी नही की जाती है, तो सरकार से मिलनेवाली सारी सहायता ऊँट के मुँह में जीरे के बराबर ही होगी। इसके लिए कार्यकर्ताओं की एक विशाल सेना जरूरी है, जो गाँवों में बराबर घूमती रहे और लोगों को जगाती रहे। ऐसे कार्यकर्ता तैयार करने और उन्हें प्रशिक्षित करने का कार्यक्रम बन रहा है। शान्ति-सेवा-दल के द्वारा वह काम होगा। उडीसा में पिछले साल इस प्रकार के २८ शिविर हुए, जिनमें १,५०० व्यक्तियो ने भाग लिया। इस वर्ष देशभर में राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे शिविरो का आयोजन किया जायगा। ●
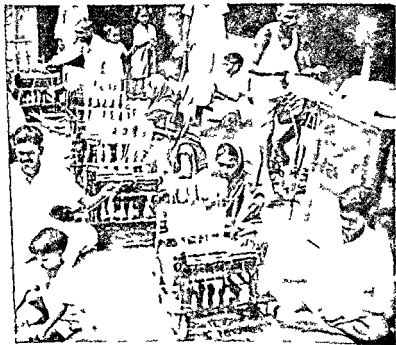
नयी औद्योगिक क्रांति का प्रतीक अंबर परिश्रमालय

शांतिसेना शिविर, अहमदाबाद के शिविरार्थी

नेफा के एक शांतिकेन्द्र मे

: ७ :

खादी

सन् १९१९ में गाधीजी ने भारत की गरीबी को जब अपनी आँखों से देखा, तब उन्हें खादी-प्रवृत्ति को पुनरुज्जीवित करने की बात सूझी। वह आन्दोलन धीरे-धीरे विकसित होता गया और उसके साथ-साथ दूसरे ग्राम-उद्योग जुडते गये। खादी अहिंसक समाज-रचना का प्रतीक और अहिंसक अर्थ-नीति की केन्द्रबिन्दु बनी।

खादी-कार्य को बढाने और फैलाने के लिए सन् १९२५ में अखिल भारत चरखा संघ की स्थापना हुई और ग्रामोद्योगो का पुनरुत्थान करने की दृष्टि से सन् १९३५ में अ० भा० ग्रामोद्योग संघ गठित हुआ। इन दो अखिल भारतीय संगठनो के अलावा सैकडो स्थानीय संस्थाएँ थी, जो इन्ही कामो में लगी हुई थी। सन् १९४६ तक देशभर में खादी और ग्रामोद्योगो का उत्पादन लगभग १ करोड ६ लाख रुपये से कुछ अधिक था।

यह स्वराज्य के पहले की बात है। स्वराज्य के बाद भारत-सरकार ने इन्ही कामो को बढावा देने के लिए खादी-ग्रामोद्योग कमीशन की स्थापना की। इसे सलाह-परामर्श देने के लिए दूसरा एक मण्डल (बोर्ड) भी है। इसी काम के लिए प्रत्येक राज्य में अलग-अलग बोर्ड भी हैं। इनके अलावा देशभर में छोटी-बडी लगभग दो हजार से अधिक सस्थाएँ हैं, जो खादी और ग्रामोद्योग के काम के लिए ही समर्पित हैं। सन् १९६५ में खादी का कुल उत्पादन २०.९८ करोड रुपये का हुआ और '६६ में २१.१२ करोड रुपये का। ग्रामोद्योगो का उत्पादन सन् '६५ में ३५.५५ करोड रुपये का और सन् '६६ में ३४.७७ करोड का हुआ। इन सब प्रवृत्तियो में लगभग १७०

करोड की पूंजी लगी है। इसमें अधिकाश हिस्सा केन्द्रीय और राज्य सरकारो का है।

कतवैये, बुनकर और अन्य कारीगर कुल मिलकर लगभग २६ लाख लोग इन उद्योगो में, कुछ पूरी और कुछ आशिक रोजी पा रहे है।

खादी को समझने के लिए कुछ और तथ्यो को देख लेना भी उचित होगा।

इस समय भारत की जनसख्या लगभग ४७ करोड है। इसमें से ८५ प्रतिशत सख्या खेती पर निर्भर है। इतने लोगो को खेती में बारहो महीने पर्याप्त रोजी नही मिल पाती है। लगभग आधा समय वे बेकार रहते हैं। स्पष्ट है कि आधा समय बेकारी में बितानेवाले लोग किसी कदर अच्छी स्थिति में रह नही सकते। खाली समय के लिए उन्हे कुछ-न-कुछ धधा मिलना चाहिए। अथवा, इसके बजाय क्या यह नही हो सकता कि कुछ लोगो को खेती से हटा लिया जाय और उन्हें कोई दूसरा ही काम दे दिया जाय ?

दूसरे देशो में खेती पर कम-से-कम लोग लगे होते हैं। जापान में केवल ४० प्रतिशत हैं, अमरीका में १५ प्रतिशत हैं। तो भारत मे भी वैसा प्रयत्न क्यो न किया जाय ?

स्वराज्य के बाद हमारे नेताओ ने सोचा कि शहरो में बडे-बडे कल कारखाने खोले जायँ और लोगो को देहातो से बाहर ले जाकर वहाँ काम दिया जाय। इसमें उनका विशेष भरोसा था। लेकिन क्या हुआ ?

सन् १९५०-५१ और १९५९-६० के बीच हमारे देश में काम करने योग्य लोगो की सख्या ३ करोड २० लाख बढी, यानी इतने लोगो को नये सिरे से रोजी देने की जरूरत पडी। इसी अवधि में जो बडे उद्योग खडे किये गये, उनके जरिये केवल ११ ८ लाख लोगो को ही काम मिल सका। यह ३ करोड २० लाख लोगो का केवल ४ प्रतिशत होता है। तो बाकी ९६ फीसदी लोगो को उनके अपने भाग्य पर यानी मुख्यतया खेती के भरोसे पर छोड दिया गया। इस सख्या में उन करोडो का हिसाब शामिल नही

है, जो सन् '५० के पहले से ही बेकार थे और इस अवधि मे भी बेकार ही रहे हैं ।

लोग जब २० गुना बढ गये है, तब उद्योगो को भी २० गुना क्यो नही बढा दिया जाता ?

इसीलिए बढा नही पाते कि उसके लिए धन नही है । उदाहरण के लिए मान लीजिये, एक कपडे की मिल खोलनी है । उसमें लगभग एक करोड रुपये लगते है । उसमें केवल ५ सौ लोगो को काम दे सकते हैं । इसका मतलब यह कि एक व्यक्ति को काम देने के लिए २० हजार रुपये की पूँजी लगानी होती है । अर्थात् ऐसे कारखानो के जरिये देश के ४ करोड बेकारो को काम देने की बात सोचे, तो इसके लिए ८०,००० करोड रुपयो की जरूरत पडेगी । आज देश के सभी बडे उद्योगो और व्यवसायो में जो पूँजी लगी है, वह ५,००० करोड से भी कुछ कम है ।

इसलिए इन सबको काम देने के लिए कोई दूसरा ही उपाय सोचना होगा । व्यावहारिक उपाय यही हो सकता है कि छोटे-छोटे उद्योग फैलाये जायँ, जिनमे कम-से-कम पूंजी लगती हो और जिनको चलाने में मनुष्य-शक्ति का उपयोग मुख्य रूप से हो सके । अम्बर चरखे के द्वारा एक व्यक्ति को काम देना है, तो उसमें लगभग २५० रु० की पूँजी लगती है । हाथ-करघे के जरिये काम देना हो, तो लगभग ३०० रु० की पूँजी लगेगी । इस तरह के सादे और छोट छोटे औजारो के द्वारा करोडो लोगो को उनकी आवश्यकता के अनुसार पूर्ण या आंशिक रोजी दी जा सकती है ।

यह सही है कि छोटे उद्योगो में पैदा होनेवाले माल बडे कारखाने के माल से कुछ महँगे पडते हैं । एक-एक अदद पर, कपडे के एक-एक मीटर पर, तेल के एक-एक किलोग्राम पर अधिक श्रम लगना है । लेकिन इसकी ओर देखने की एक और भी दृष्टि है ।

एक गाँव लीजिये, जिसकी आबादी ५०० है । एक व्यक्ति के पीछे सालाना २० रुपये का कपडा मान लें, तो उस गाँव में सालभर में कुल १० हजार रुपये का कपडा जरूरी होगा । इसे खरीदने के लिए वे धान, गेहूँ, दाल आदि

अपनी खेती की पैदावार बेचकर पैसा लाते होंगे । मान लीजिये, वे अपनी फुरसत के समय का उपयोग करने लगते हैं और उस समय अपना कपडा स्वय बनाने लगते है, तो गाँव में १० हजार रुपये की बचत हो जाती है । उसमें से कपास का दाम घटा दें तो लगभग ७,५०० रुपयों की बचत साफ है । गाँव सालाना लगान के रूप में जो रकम चुकाता होगा, उससे यह रकम सात-आठगुना अधिक है ।

इसी तरह चीनी, तेल, साबुन, जूता, कागज आदि नित्योपयोगी चीजो को एक-एक करके लेते जायें, जिनके लिए कच्चा माल गाँव में मिल सकता है । उसका हिसाब लगायें तो पता चलेगा कि इन उद्योगो को चलाने से गाँव कितनी बडी धनराशि की बचत कर सकता है ।

यह सच है कि कइयो के पास पूरा काम है, उनको पूरक उद्योगो की आवश्यकता नहीं है । वे कह सकते है कि "हमें तो सभी चीजें खरीदनी होगी । तब हम महँगी खादी क्यो खरीदें ? उससे हम नुकसान में रहेंगे ।"

आज लाखो लोग बेकार है, क्योकि उनके द्वारा तैयार किये गये माल को खरीदनेवाले बहुत कम हैं । उन बेकारो में कई तो भूखों मरने की स्थिति में है और उनको राहत पहुँचाने के लिए सरकारो को करोडों रुपये दान के रूप में बाँटना पडता है । यह धन लोगो की जेब से ही जाता है । जो राष्ट्र अपने को समाजवादी कहते है, वहाँ यह अनिवार्य माना जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति को रोजी, रोटी और कपडा मिलना ही चाहिए, जैसा कि इग्लैण्ड, अमरीका आदि में हो रहा है । लेकिन यह हम समझ सकते हैं कि इस प्रकार मुफ्त में पैसा बाँटने के बजाय उनसे कुछ काम कराकर, उनकी पैदा की हुई चीजो को दो पैसे अधिक देकर खरीदना अच्छा है । काम से आदमी का मान बढता है । मुफ्त की खैरात मान घटाती है ।

इसीलिए सर्वोदय-आन्दोलन का कहना है कि ऐसे लोगों की निर्मित वस्तुओ को जरा अधिक दाम देकर खरीदें । दाम में जो अधिक पैसा देना पड़ता है, इसे दान समझ लीजिये । इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यदि हम यह निश्चय करें कि सरकार 'डोल' देकर, मुफ्त में बेकारो को पैसा

दे, तो उसके लिए भी किसी नये 'कर' के रूप में हमीको कुछ रकम देनी होगी।

सर्वोदय-आन्दोलन समाज को करुणा और सेवा का आधार देना चाहता है। जब हम देखते हैं कि लोग दु खी हैं, तब उसका हम पर प्रभाव पड़ता है और हम उनकी कुछ-न-कुछ सहायता करते ही हैं। यह है करुणामूलक हार्दिक सेवा। जब सभी ऐसा करने लगते हैं, तो समाज मानवता से समृद्ध होगा, मानवीय भावना से सम्पन्न होगा।

इस प्रकार से खादी-ग्रामोद्योगो को सहारा देना भूदान-आन्दोलन की तरह, सेवा का ही एक रूप है।

बुनियादी सिद्धान्तो को हानि न पहुँचाते हुए खादी और ग्रामोद्योगी वस्तुओं को सस्ता करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इसी प्रयत्न का एक परिणाम अम्बर चरखे का आविष्कार है। साधारण चरखे से छह-सात-गुना अधिक उत्पादन अम्बर चरखे द्वारा होता है। इसी प्रकार दूसरे ग्रामोद्योगो में भी सुधरे औजारो को दाखिल किया गया है। इन उद्योगो की कई प्रक्रियाओ में बिजली-शक्ति का भी उपयोग किया जाता है। इसमें इतना ध्यान रखा जाता है कि बिजली लगाने के कारण कोई व्यक्ति बेकार न हो जाय, किसीकी रोजी छिन न जाय, बल्कि मनुष्य की शक्ति में वृद्धि हो सके और उसे अधिक सक्षम और अधिक उत्पादक बनाया जा सके। सुधरे करघो से भी अधिक उत्पादन होने लगा है। अधिकाधिक उत्कृष्ट औजारो की खोज और प्रयोग बराबर जारी है।

फिर भी ज्यादातर लोगो को ये सब साधन बडे महँगे पडते हैं। इसलिए सरकार से सहायता माँगी गयी थी कि वह खादी पर १९ प्रतिशत की सहायता दे, ताकि खरीदार को एक रुपये की खादी ८१ पैसे में ही मिल सके। सरकार ने वह सहायता स्वीकार की और दी भी गयी। तब भी खादी मिल के कपडे से महँगी ही पडती थी। फिर भी देश में खादी खरीदने-वाले कम नही हैं। आज भी १५-१६ करोड रुपये की खादी खपती है। लेकिन यह सागर में बूंद के बराबर है। खादी और ग्रामोद्योगो के द्वारा

लगभग २० लाख कतवैये, बुनकर और अन्य कारीगरों को रोजी मिल रही है। लेकिन देश में इससे कम-से-कम २० गुना अधिक बेकार पड़े हैं, जिन्हें काम की आवश्यकता है। खादी से ही इन सबको काम देना हो, तो खादी-उत्पादन को आज से सैकड़ों गुना बढ़ाना होगा।

आज तक खादी और ग्रामोद्योग प्रवृत्तियाँ जो फैली हैं, वह मुट्ठीभर त्यागी कार्यकर्ताओं के प्रयास से फैली हैं। लेकिन इन्हें देश के प्रत्येक गाँव में फैलाना हो, तो यह तभी सम्भव होगा, जब गाँववाले स्वयं इसे अपने हाथ में लेते हैं।

इसी हेतु से दो साल पहले विनोबाजी की राय के अनुसार खादी-कार्य की नीति और पद्धति में एक परिवर्तन किया गया। अब तो सभी गाँवों को अपनी-अपनी खादी बना लेने का महत्त्व समझ लेना चाहिए। खादी पर जो सहायता दी जाती थी, वह अब 'मुफ्त बुनाई' योजना में बदल गयी है।

इस योजना के अनुसार जितना भी हाथ-कता सूत होता है, उसे बुनने का पूरा खर्च सरकार दे देती है। इसका अर्थ यह कि जो किसान खुद कपास पैदा कर लेता है और फुरसत के समय में कात लेता है, उसको अपने कपड़े के लिए नकद एक पैसा भी खर्च नहीं करना पड़ता।

खादी के इस नये कार्यक्रम को कार्यान्वित करने और फैलाने के लिए निश्चित ही ग्रामदानी गाँव अनुकूल क्षेत्र हैं। खादी और ग्रामोद्योगों के बिना ग्रामदानी गाँवों की अर्थ-रचना में आमूल परिवर्तन असम्भव है। त्रिविध कार्यक्रम में केवल खादी का नाम आया है, लेकिन वह दूसरे सभी ग्रामोद्योगों का प्रतीक है। उन उद्योगों का महत्त्व जरा भी कम नहीं है।

प्रत्येक ग्रामसभा को सकल्प करना चाहिए कि एक-डेढ़ साल के अन्दर वह गाँवभर की जरूरत का कपड़ा स्वयं बना लेगी। देश में खादी-काम करनेवाली अनेक सस्थाएँ हैं। उस उस क्षेत्र की सस्था ग्रामसभा को काम शुरू करने में आवश्यक सहायता अवश्य कर सकेगी।

५०० की आबादीवाले किसी गाँव की मिसाल लें, तो जैसा पहले कहा गया, बाहर से वस्त्र न खरीदने के कारण ७,५०० रुपये की बचत तो

होती ही है, उसके अलावा लगभग २,००० रुपये बाहर से गाँव में आ सकते हैं, जो बुनाई-मदद के रूप में बुनकरों को खादी-ग्रामोद्योग कमीशन देता है।

गाँव में यदि कोई बुनकर नहीं है तो बाहर से एक बुनकर-परिवार लाकर बसाया जा सकता है, या गाँव के ही किसी व्यक्ति को बुनाई सिखा सकते हैं, ताकि वह उस धंधे को अपना ले। इसके लिए आर्थिक सहायता या तकनीकी मदद खादी-ग्रामोद्योग कमीशन की ओर से दी जाती है। ●

: ८ :

खादी का व्यापक महत्व

हमारे देश को तबाह करनेवाली दो भयंकर बीमारियाँ हैं—नित्य बढती हुई महँगाई और मुनाफाखोरी। खादी और ग्रामोद्योग इनको रोकने में बड़े सहायक हो सकते हैं। महँगाई का एक कारण यह है कि हमारी सरकार ने बड़े-बड़े उद्योग-धंधे, रेलवे-कारखाने और इस्पात-कारखाने खोलने में बहुत बड़ी धनराशि खर्च कर दी है। ये सब उद्योग देश के लिए आवश्यक जरूर हैं, लेकिन देश को उनका प्रत्यक्ष लाभ तुरन्त नहीं, कई वर्षों बाद मिलता है। उससे पहले उनसे ऐसी कोई चीज पैदा नहीं होती, जिसे लोग बाजार में जाकर खरीद सकें। लेकिन उनमें जो धन खर्च होता है, वह मजदूर, क्लर्क, कर्मचारी, ठीकेदार आदि अनेक लोगों के पास पहुँचता है, और वे उस धन से कई सामान खरीदना चाहते हैं। इस प्रकार पैसे का चलन तो बढ जाता है, लेकिन उससे खरीदने योग्य पदार्थ तो बढते नहीं हैं। यही महँगाई है।

इसे दूर करने का एक यही मार्ग है कि नित्योपयोगी चीजों का उत्पादन बढ़ाया जाय। ग्रामोद्योगों के द्वारा ही यह काम अधिक कारगर हो सकता है। पिछले प्रकरण में हमने देखा है कि देश में करोड़ों ऐसे लोग हैं, जिन्हें पूरे या आंशिक काम की आवश्यकता है, लेकिन सक्षम होते हुए भी वे बेकार हैं। इन सब लोगों की जो शक्ति बेकार जा रही है, उसका हिसाब लगाया गया है और बताते हैं कि यह शक्ति पूरा समय काम करनेवाले लगभग १० करोड़ लोगों की शक्ति के बराबर है। रोज की औसत मजदूरी कम से-कम १ रुपया माना जाय तो सालभर में लगभग २५ सौ करोड़ रुपया की हानि देश को हो रही है।

यह रकम बहुत बडी है। जैसा पहले कहा गया है, एकमात्र खादी और ग्रामोद्योगो के द्वारा ही इतने लोगो को काम देना सम्भव है। उन्हें व्यापक रूप से ठीक ढग से फैलाया जाय तो हजारो-करोडो गुना उत्पादन बढ सकता है और बराबर बढती हुई महँगाई को निश्चित रूप से रोका जा सकता है।

महँगाई का दूसरा कारण है मुनाफाखोरी। कपडा, चीनी, तेल, साबुन आदि सब चीजें बनानेवाले कारखाने निजी उद्योगपतियो के हाथ में हैं। उन वस्तुओ का व्यापार भी निजी ही है। सहज ही ये मालिक लोग भरसक अधिकाधिक मुनाफा कमाना चाहते हैं। इसे नियत्रित करने का प्रयत्न सरकार करती है, लेकिन उससे लाभ नही हो रहा है। कट्रोल लागू करते है, तो उसका भी अधिकार मुट्ठीभर अधिकारियो के हाथ में ही रह जाता है, इससे भ्रष्टाचार और अव्यवस्था बढती ही है।

सरकार ने लोहा-इस्पात, बिजली और यत्र-सामग्रियो आदि के उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया है। क्या नित्योपयोगी वस्तु के कारखानो का भी राष्ट्रीयकरण नही करना चाहिए? लेकिन इस तरह के राष्ट्रीयकरण या सरकारी मालिकी से सरकार के हाथ में बहुत सारी शक्ति इकट्ठी हो जाती है, और अत्यधिक शक्ति का एकत्र होना बडा भयानक है। तिस पर सरकारी कर्मचारियो द्वारा जो व्यवस्था राष्ट्रीकृत उद्योगो की होगी, वह पूरी विश्वसनीय ही होगी, ऐसा नही है। उनमें लापरवाही और अक्षमता बहुत है।

इसका उपाय यही है कि नित्योपयोगी वस्तुओं का उत्पादन और वितरण, दोनो सीधे जनता के हाथ में होना चाहिए। यहाँ फिर वही खादी और ग्रामोद्योग आते हैं। ग्रामीण लोग अपनी ग्रामसभा या सहकारी समिति के द्वारा उत्पादन और वितरण की व्यवस्था बैठा सकते हैं। ऊँचे स्तर पर, ऐसी ग्रामसभाओ और स्थानीय सहकारी समितियो के सगठन, संघ या फेडरेशन बनाये जा सकते हैं। इससे आर्थिक स्थिति का नियत्रण वास्तव में जनता के हाथ में आता है। तब आज के निजी व्यवसायियो और

उद्योगपतियों को जनता के इन संगठनों की नीति के अनुसार अपने को बदलने के लिए विवश होना ही पड़ेगा।

पूँजीवादी शोषण को खतम करने का यही कारगर उपाय है। जैसा कि विनोबाजी कहते हैं, ये साम्यवादी और समाजवादी लोग पूँजीवाद का समाप्त करने की बात तो करते है, लेकिन उनके द्वारा तैयार किये गये माल को काम में लेकर उन्हींको पोषण दे रहे है। खादी ग्रामोद्योगों का तो यह प्रयत्न है कि उस पूँजीवाद को मिटा ही दिया जाय।

आधुनिक काल में लोगों की प्रवृत्ति भारी शहरों में बड़ी संख्या में आ बसने की हो गयी है। कई पाश्चात्य राष्ट्रों में ८५-९० प्रतिशत लोग शहरों में रहते हैं। इन शहरों के कारण कई नयी नयी पेचीदा समस्याएँ पैदा होती है। उनमें अपराध और अनीति फैलती है। सफाई, पानी आदि की व्यवस्था भी बड़ी कठिन हो जाती है। वहाँ बड़ी भीड़ रहती है, स्वास्थ्य बिगड़ता है। लोगों को ताजा हवा और धूप मिलती नही। आजकल तो आवागमन भी एक समस्या बन गयी है। सड़कों पर बेहद भीड़ बनी रहती है।

देहातों में अनेक प्रकार की सुविधाएँ हैं। वहाँ प्रत्येक आदमी गाँव के हरएक को जानता है। वे एक दूसरे की मदद आसानी से कर सकते हैं। खुला आकाश ताजा हवा और धूप वहाँ भरपूर है। अपराध और अनीति जैसी गम्भीर समस्याएँ वहाँ आ नही सकती। लेकिन गन्दगी, गरीबी, बेकारी और एकान्त के कारण उद्यमशील लोगों का मन वहाँ नही लगता, वे शहरों में जाकर अपनी तकदीर आजमाने का प्रयत्न करते हैं।

सर्वोदय का लक्ष्य गाँवों को टूटने से बचाना है और उन्हें सशक्त और पुनरुज्जीवित करना है। शहरों में अमुक कुछ सुविधाएँ हैं, और लोग उनको देखकर ही शहर की ओर आकृष्ट होते हैं। लेकिन वे सुविधाएँ आज गाँवों में भी प्राप्त हो सकती हैं और गाँवों को वे सुविधाएँ प्राप्त करनी भी चाहिए। गाँवों को साफ रख सकते हैं। वहाँ अच्छे स्कूल, अस्पताल और पुस्तकालय आदि चला सकते हैं। सड़कें अच्छी हो जायें, तो गाँव शहरी

दुनिया से दूर नही पडे रहेंगे । गाँवो मे टेलीफोन और रेडियो पहुँच सकते हैं, और उनके द्वारा गाँव बाहर से सपर्क रख सकते है ।

आज शहरो की समृद्धि बडे-बडे उद्योगो पर निर्भर है । सामान्यतया नये उद्योग सभी शहरो में खडे होते है और उनके कारण शहर बडे बनते जाते हैं । सर्वोदय चाहता है कि उद्योग गाँवो मे खडे हो और फैलें । गाँवो में जब उद्योग चलने लगेंगे, तब गाँव अधिक समृद्ध होगे । छोटे उद्योग बडे उद्योगो के ही समान समर्थ और सक्षम हो सकते हैं । कई गाँवो में आज बिजली पहुँच गयी है । अगर सबके सब गाँवो में बिजली पहुँचे, जल्दी पहुँचे, तो ग्राम-उद्योगो की कई प्रक्रियाओ मे उसका उपयोग किया जा सकेगा। इससे मनुष्य पर आज जो अमानुषी भार पडता है, वह नही पडेगा और उत्पादन भी बढेगा । अधिक पैदावार बढानेवाले औजारो का निर्माण हो सकता है, शोध हो सकता है, प्रयोग हो सकता है और गाँवो में उन्हें चालू कर सकते हैं । ग्रामीण और क्षेत्रीय योजना ऐसी बनायी जा सकती है कि इन औजारो के कारण गाँव का एक भी आदमी बेकार न रहे, विषमता पैदा न हो और शोषण न हो ।

गाँवो में लोग अपने घरो में या घर के ही आसपास मनोहर वातावरण मे काम करते हैं । काम करने में उनको अधिक उत्साह आता है । और आसानी से वे विश्राम भी कर सकते हैं । वे उस बेहद परेशानी, चिंता और तनाव से बचेंगे, जिसके शहरी लोग शिकार बने हुए हैं । घर में और दुनिया में शान्ति स्थापित करने में यह एक बहुत बडा आवश्यक तत्त्व है ।

इस प्रकार खेती और अधिकाश गाँवो में उद्योग रहेंगे । और बिलकुल थोडे से बडे उद्योग शहरो में रहेंगे । इस्पात, रेलें, जहाज आदि बडे उद्योग तो शहरों में ही चलाने होगे । लेकिन उनका आकार और उनकी सख्या अत्यधिक नही होनी चाहिए ।

जिस अर्थ-व्यवस्था में इस प्रकार ग्रामीण और छोटे उद्योगो की प्रधानता होती है, उसे 'विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था' कहते हैं । जिस प्रशासन-पद्धति में ग्रामसभा बुनियाद रहेगी और अपने प्रशासन के अधिकाधिक भाग ग्रामो

के हाथ में रहेंगे, उसे 'विकेन्द्रित राज्य-व्यवस्था' कहते हैं। इन दोनों के आधार पर विकेन्द्रित समाज का निर्माण होगा। प्रत्येक व्यक्ति को पूरी स्वतन्त्रता और विकास का पूरा अवसर देने का आश्वासन एकमात्र विकेन्द्रित समाज ही दे सकता है। इसीलिए सर्वोदय में इसकी अनिवार्यता मानी गयी है।

सर्वोदय केवल भारत तक सीमित नहीं है, बल्कि समूचे विश्व के लिए है। आखिर दुनिया को एक होना है। विनोबाजी की यह कल्पना है कि एक सिरे पर रहेगा स्वायत्त और स्वशासित गाँव और शहर, तथा दूसरे सिरे पर रहेगा विश्व। इन दोनों के बीच प्रदेश, देश आदि जितने भी हिस्से होंगे, वे सब प्रशासन की सुविधा की अलग-अलग इकाइयाँ ही रहेंगी, उनका इससे अधिक महत्त्व नहीं रहेगा। सारे विश्व के लोग जाति, वंश, भाषा, धर्म, विचार आदि सभी भेदभाव भूलकर एक महान् परिवार बनाकर रहेंगे।

ग्रामदान, खादी और शान्ति-सेना विश्व के उस भव्य भविष्य की बुनियाद डाल रही है। अब तक हमने शुरू के दो कार्यक्रमों के बारे में विचार किया। अब अगले प्रकरण में तीसरे कार्यक्रम पर विचार करेंगे। ●

: ९ :

शान्ति-सेना का आदर्श

३० जनवरी १९४८ का दिन, शाम के ५-१० का समय। नयी दिल्ली में बिडला-भवन के आँगन में गाधीजी तेजी से प्रार्थना-स्थल की ओर बढे जा रहे थे। उन्हें जरा देर हो गयी थी, क्योंकि वे कुछ महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय समस्याओं की गम्भीर चर्चा में लगे हुए थे, इसलिए जल्दी में थे।

गाधीजी मच पर पहुँचने ही वाले थे कि इतने में उन्हें तीन गोलियाँ लगी और वे धराशायी हो गये! न उनके मुंह से कोई कराह निकली, न हत्यारे के प्रति आक्रोश। उनके ओठो से यही एक शब्द निकला—'हे राम!'

इस प्रकार, जैसा कि विनोबाजी ने बाद में भावनाभरे शब्दो में व्यक्त किया : "गाधीजी प्रथम शान्ति-सैनिक थे, जिन्होने अपना कर्तव्य निभाते हुए प्राण त्यागे। उन्होने एक सेनापति के नाते आदेश दिया और सैनिक के नाते उस पर अमल किया।"

शान्ति-सेना ऐसे लोगो का एक समूह है, जो समाज के सभी सघर्षों और तनावो को शान्तिपूर्ण उपायो से सुलझाने तथा हिंसक उपद्रवो को शान्ति से शान्त करने के लिए कटिबद्ध हो। यह विचार कई वर्ष पहले गाधीजी ने प्रकट किया था। उन्होंने कहा था :

"कुछ समय पहले मैंने ऐसे स्वयसेवकों की एक सेना बनाने की तजवीज रखी थी, जो दंगों—खासकर साम्प्रदायिक दंगों—को शांत करने में अपने प्राणों तक की बाजी लगा दें। विचार यह था कि यह सेना पुलिस का ही नहीं, बल्कि फौज तक का स्थान ले ले। यह बात बड़ी महत्त्वाकाक्षा की मालूम पड़ती है, शायद यह असम्भव भी साबित

हो। फिर भी कांग्रेस को अगर अहिंसात्मक लड़ाई में कामयाबी हासिल करनी हो, तो उसे ऐसी परिस्थितियो का शान्तिपूर्वक अहिंसा से सामना करने की अपनी शक्ति बढानी ही चाहिए।"

स्वराज्य से पहले भारत में जो भयानक साम्प्रदायिक दगा फूट पडा और देश के विभाजन के बाद जिसने अत्यन्त उग्र रूप धारण किया, तब गाधीजी उस साम्प्रदायिक उत्तेजना की अग्नि को शान्त करने के प्रयत्न में जी-जान से लग गये और उसी प्रयत्न में कुरबान हो गये।

उनकी शहादत ने उस समय भाई-भाई के उस भीषण सघर्ष को शान्त तो कर दिया, लेकिन भारत में उसके बाद अनेक प्रकार से हिंसक उपद्रवो का सिलसिला बराबर चला आ रहा है। भाषा के प्रश्न पर, धर्मपन्थ के के प्रश्न पर, राज्यो के प्रश्न पर, इसी तरह कई कारणो से यहाँ हिंसक उपद्रव हुए हैं। मजदूर-आन्दोलनो और छात्रो के विरोध-प्रदर्शनो में भी हिंसा हुई है, पुलिस का या सरकारी निर्णयो का बदला लेने तक की नौबत आयी।

ऐसे उपद्रवो को दबाने के लिए पुलिस का सहारा लेना पडा। पुलिस की मदद में सेना को भी बुलाना पडा। इन उपद्रवों तथा पुलिस की गोलियो के कारण कई जानें गयी। सम्पत्ति की हानि भी काफी हुई। ऐसी सारी आन्तरिक अशान्तियो के कारण देश कमजोर होता है और देश की सुरक्षा खतरे में पडती है। देश की एकता के लिए भी यह बडा घातक है। पुलिस पर जो अत्यधिक खर्च करना पड रहा है, यह देश की सम्पत्ति का अपव्यय ही है। ऐसे सब मामलो में अपने ही नागरिको के खिलाफ फौज का उपयोग करना पडता है। यह बडे खेद की बात है।

समाज को अनुशासन में रखने के लिए पुलिस और सेना का हमेशा उपयोग करते रहना क्रमश पुलिस और सेना की शक्ति और महत्त्व को बढ़ावा देना है। इससे लोकतन्त्र की बुनियाद धीरे-धीरे, लेकिन निश्चित रूप से शिथिल होती जाती है और उसके अस्तित्व को ही खतरा पैदा होता है। लोगो को हिंसा की आदत पड जाती है और लोकतन्त्र में विश्वास खत्म हो जाता है।

इसलिए हमारे देश के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि सारे विवाद और संघर्षों का समाधान शांतिमय उपायों से ही किया जाय। जब तक जनता स्वयं ऐसे शांतिमय तरीकों की आदी नहीं होती है तब तक इसका प्रारम्भ करने के लिए त्यागी और सेवाव्रती सेवकों के एक समूह की आवश्यकता रहेगी।

ऐसे उपद्रवों के कारणों की छानबीन करने लगते हैं, तो अनेक बातें दिखाई देती हैं, फिर भी विशेष महत्त्व के दो प्रकार के कारण हमारा ध्यान खींचते हैं। एक प्रकार के उपद्रवों के पीछे जाति, धर्म और भाषाई समूहों के मन में अरसे से गहरा बसा हुआ संशय और द्वेषभाव होता है। कभी इतिहास में ऐसी घटनाएँ हो गयी हैं, जिनके कारण इस तरह के संशय और द्वेष पैदा हुए हैं। लेकिन आम तौर पर उन बातों का आज के जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं रहता है।

उदाहरण के लिए साइप्रस में ग्रीक और तुर्की लोगों में, या मध्यपूर्व देशों के अरब और यहूदियों में आपसी द्वेष और शंका की भावना होती है, तो इसी संघर्ष में उनकी बहुत बड़ी शक्ति खर्च हो जाती है। इसके कारण वे 'सबके हित' की किसी भी प्रवृत्ति में मिल-जुलकर शक्ति लगा नहीं पाते और आधुनिक विज्ञान ने जो-जो विशाल सुविधाएँ निर्माण की हैं, उनका लाभ उठा नहीं पाते। यही बात भारत में पिछले दिनों संकीर्ण और क्षुद्र भावना के कारण जो दंगे और उपद्रव हुए, उन पर भी लागू है।

दूसरे प्रकार के उपद्रवों के कारण भिन्न कोटि के हैं। हमारे देश की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था में बहुत-सी अन्यायपूर्ण बातें भरी हुई हैं। कुछ लोगों के पास बहुत जमीन है, कुछ लोगों के पास बिल्कुल नहीं। कुछ लोगों के हाथ में हजारों लोगों को काम देने की शक्ति और जीविका के साधनों का हक केन्द्रित हो गया है, कुछ लोगों के हाथ में कुछ भी नहीं है। कुछ लोग अपने को श्रेष्ठ मानते हैं और जो छोटे या निचले हैं, उनको अपने बराबर मानने को तैयार नहीं होते। इस तरह की अगणित विषमताएँ हैं। इसके अलावा आर्थिक रोग भी बहुत हैं, जिनके कारण अन्न संकट, महँगाई

आदि कष्ट पैदा होते है । इन सबके कारण लोगो को बडी कठिनाई का सामना करना पडता है ।

लोग जब इन अन्यायो और विषमताओ को सहन नही कर पाते है या ये दु ख बरदाश्त नही कर पाते है, तब विद्रोह कर बैठते है । अक्सर इन दु खो का सामना शान्तिमय ढग से कैसे किया जाय, यह वे जानते नही है या फिर उनमें उतना धीरज नही रहता । इसी कारण हिंसाकाण्ड और उपद्रव फूट पडते है ।

आजकल इनका एक जागतिक पहलू भी है । ससार में कई राष्ट्र ऐसे है, जहाँ की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था दोषपूर्ण है, और उसके कारण बहुसख्य जनता को गरीबी और भूख का शिकार होना पड रहा है । यद्यपि विज्ञान के कारण मानव-कल्याण की विशाल सम्भावनाएँ खुल गयी है, तथापि उन सम्भावनाओ का लाभ तभी प्राप्त हो सकेगा, जब ये अन्याय और पुरानी पद्धतियाँ बदल जायेंगी ।

अधिकाश लोगो के मन में दृढ धारणा बनी हुई है कि इन अन्यायपूर्ण पद्धतियो को खतम करने के लिए एक जागतिक क्रान्ति की आवश्यकता है । उनका विश्वास है कि वह क्रान्ति हिंसक ही होनी चाहिए और उसके कारण विश्व-युद्ध छिड जाय तो भी हर्ज नही ।

यद्यपि पिछले जमाने में कई सामाजिक क्रान्तियाँ हुई है, जिनके कारण विश्व-युद्ध की नौबत नही आयी, लेकिन आज विश्व की परिस्थिति ऐसी है कि कही कोई सघर्ष छिडता है, तो उससे विश्व-युद्ध का खतरा हो सकता है । और आज यदि तीसरा विश्व-युद्ध होता है तो उसमें अणु-अस्त्रो का प्रयोग जरूर हो सकता है और सारी मानव-सस्कृति मिट्टी में मिल सकती है ।

इसलिए दूसरे लोग युद्धो और सघर्षो से डरते है तथा शान्ति को प्राथमिकता देते है । वे हर कीमत पर, यहाँ तक कि अन्याय और दु खो की आज की हालत को ज्यो-का-त्यो बरदाश्त करते हुए भी शान्ति बनाये रखना पसद करते है ।

इससे ससार के सामने एक द्वन्द्व खडा होता है—शान्ति या युद्ध ?

लेकिन दु खी ससार आज क्रान्ति और शान्ति दोनो चाहता है । ससार को ये दोनो मिल सकते है, यदि हम शान्तिमय क्रान्ति कर सकें अथवा अमुक प्रकार की क्रान्तिकारी शान्ति कायम कर सकें । वैसा कोई समाधान क्या हमारे पास है ? इस प्रश्न के उत्तर पर ससार का भविष्य निर्भर है ।

सन् १९५१ में जब विनोबाजी तेलगाना के पीडित क्षेत्रो में गये, तब ऐसा ही एक समाधान, इसी प्रकार का उत्तर उनको मिला । वहाँ हिंसक उपद्रव फूट पडा था । उस उपद्रव के केन्द्र में भूमि की समस्या थी । वहाँ कुछ लोगो के हाथ में बेहद जमीन थी और बाकी अधिकाश लोग बेजमीन थे । एक गाँव मे विनोबाजी की अपील पर जमीदार रामचन्द्र रेड्डी ने स्वेच्छा से भूमिहीनो के लिए १०० एकड जमीन दान के रूप में दी तो विनोबाजी को भूमि-समस्या का शान्तिमय समाधान मिल गया । इस अल्प आरम्भ से विशाल भूदान-आन्दोलन खडा हुआ, जो भारत की शान्ति के और अन्यायपूर्ण भूमि-समस्या के परिहार के उपाय के रूप में प्रकट हुआ । आगे चलकर यही ग्रामदान-आन्दोलन के रूप में विकसित हुआ ।

इस प्रकार शान्ति-सेना के काम के निम्न पहलू प्रमुख है .

१. सघर्ष की कारणीभूत सकीर्ण मान्यताओ और दृष्टिकोणो का निवारण करना,

२ सामाजिक अन्याय दूर करना, जिससे आर्थिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन हो,

३ देशभर में शान्तिमय परिस्थिति बनाये रखने का आश्वासन देना,

४ हिंसक उपद्रवो का शमन करने के प्रयत्न में शान्तिमय साधनो से जूझना और आवश्यकता पडने पर उसके लिए अपना शरीर छोडने की तैयारी रखना,

५ और इन सब उपायो के द्वारा भारत में अहिंसक समाज-रचना की नीव डालना, जो विश्वव्यापी सहयोग और कल्याण का मार्ग प्रशस्त करनेवाला हो और युद्ध को सदा के लिए समाप्त करे ।

: १० :

शान्ति-सेना का कार्य

गाधीजी के कुछ साथियो ने जगह-जगह शान्ति-सेना के कुछ छोटे-छोटे सगठन बना तो लिये थे, लेकिन गाधीजी को अपनी कल्पना के अनुसार शान्ति-सेना के विचार को ठोस रूप देने का मौका नही मिला। विनोबाजी ने अगस्त १९५७ में केरल की पदयात्रा के बीच अखिल भारतीय स्तर पर शान्ति-सेना खडी करने का बीडा उठाया। उसी समय उन्होने शान्ति-सैनिको का एक छोटा मण्डल गठित भी किया।

इस समय भारतभर में कोई १२,२४२ शान्ति-सैनिक है।

१८ साल से बडी उम्र का जो भी व्यक्ति, जो निम्नलिखित घोषणा और प्रतिज्ञा करता है, शान्ति-सैनिक बन सकता है.

"मै विश्वास करता हूँ कि

१ सत्य और अहिंसा पर आधारित नया समाज बनना चाहिए।
२ समाज में होनेवाले सारे सघर्ष अहिंसक साधनो से हल हो सकते है और होने चाहिए, खासकर इस अणु-युग में।
३ मानवमात्र में मूलभूत एकता है।
४ युद्ध मानवता के विकास में बाधक है और अहिंसक जीवन-पद्धति का विपर्यय है, इसलिए

मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि

१ शान्ति के लिए काम करूँगा और आवश्यकता पडने पर अपने प्राण समर्पण करने को तैयार रहूँगा।
२ जाति, सम्प्रदाय, रग, पक्ष आदि भेदो से ऊपर उठने की पूरी-पूरी कोशिश करूँगा, क्योकि ये भेद मनुष्य की एकता को मानने से इनकार करते हैं।

३ किसी युद्ध में शरीक नही होऊँगा ।

४ सुरक्षा के अहिंसक साधनो तथा वातावरण को बनाने के लिए सहायता करूँगा ।

५ नियमित रूप से अपना कुछ समय अपने मानव-बन्धुओं की सेवा में लगाऊँगा ।

६ शान्ति-सेना के अनुशासन को मानूँगा ।"

प्रत्येक शान्ति सैनिक का नाम किसी शान्ति केन्द्र में दर्ज होगा और वह उससे जुडा रहेगा । एक वर्ष तक परीक्षण की स्थिति में रहेगा और उस अवधि में यदि वह स्वय त्यागपत्र देकर नही हट गया या चारित्र्य-सम्बन्धी शिकायत के कारण उसे केन्द्र ने हटा नही दिया, तो वह विधिवत् शान्ति-सैनिक माना जायगा ।

शान्ति-केन्द्र

एक गाँव या मुहल्ले में दो या अधिक शान्ति-सैनिक है, तो वे मिलकर शान्ति-केन्द्र बना सकते हैं । यह शान्ति-सेना की बुनियादी इकाई है ।

अपेक्षा यह है कि इन सैनिको की बैठक कम-से-कम सप्ताह में एक बार हो, जिसमें पिछले सप्ताह के काम की जानकारी दी जाय और आगामी सप्ताह के कार्यक्रम की योजना बनायी जाय । इनके कार्यक्रम सामान्यत ये हो सकते हैं समाज में कही कोई अशान्ति का लक्षण दिखाई दे, तो उसके परिहार का प्रयत्न करना, कोई-न-कोई समाज-सेवा, नियमित स्वाध्याय, खेल-कूद वगैरह ।

यद्यपि जगह-जगह की विशेष परिस्थिति के अनुसार प्रत्यक्ष कार्यक्रम भिन्न-भिन्न हो सकता है, फिर भी उनके तीन प्रमुख विभाग किये जा सकते हैं—श्रम, सेवा और स्वाध्याय ।

जिले में अधिक केन्द्र हो, तो उनके बीच सहयोग बनाये रखने के लिए जिला-स्तर का एक सयोजक या शान्ति सेना समिति रहेगी । इस समिति

का गठन प्रादेशिक शान्ति-सेना समिति करेगी। प्रादेशिक शान्ति-सेना मण्डल अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल के अध्यक्ष की स्वीकृति लेकर इस समिति का गठन करेगी। राज्य शान्ति-सेना समिति का काम राज्य में शान्ति-सेना के काम का आयोजन करना और जहाँ आवश्यकता पडे, वहाँ शान्ति-सैनिको को भेजना है।

अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल को सर्व सेवा सघ का अध्यक्ष नियुक्त करेगा। यह मण्डल देशभर में शान्ति-सेना का विचार फैलाने और सभी समितियो का सयोजन करने का काम करेगा। मण्डल का कार्यकाल तीन वर्ष का रहेगा। इस समय श्री जयप्रकाश नारायण इसके अध्यक्ष हैं। विनोबाजी शान्ति-सेना के प्रमुख सेनापति है, अर्थात् शान्ति सैनिको को आदेश देने का अन्तिम अधिकार उनके हाथ में है। शान्ति-सेना के वैधानिक सगठन के किसी पद पर विनोबाजी नही है, लेकिन मण्डल के सभी महत्त्व के निर्णय उनकी सलाह से ही लिये जाते ह।

अक्सर एक प्रश्न पूछा जाता है कि क्या शान्ति-सेना सफल हो सकती है? गत नौ वर्षों के अनुभव से इसके प्रति श्रद्धा सुदृढ हुई है और इसके निर्माण को प्रोत्साहन मिला है। आवश्यकता को देखते हुए आज वह सेना बहुत छोटी पडती है। विनोबाजी की कल्पना है कि ५ हजार लोगो के बीच एक शान्ति-सैनिक हो। इसका अर्थ यह कि पूरे भारत के लिए लगभग ९०,००० शान्ति-सैनिक आवश्यक होगे। लेकिन आज केवल १२,००० ही हैं और उनमें भी आधे बिहार में हैं। फिर भी इस छोटी-सी शक्ति ने जो काम किया है, जो सफलता प्राप्त की है, वह कम सराहनीय नही है।

प्रदर्शनो और झगडो के मामले में कई बार शान्ति सैनिक हिंसक उपद्रव को टालने में सफल हुए है। उदाहरण के लिए गुजरात में पृथक् राज्य के लिए जब आन्दोलन चला था, तब शान्ति बनाये रखने में शान्ति-सैनिको ने विशेष प्रयास किया था। उन्होने जुलूस निकाले, नेताओ से मिले, कई परचे प्रकाशित किये। कई बार तो जनता और पुलिस के बीच खडे रह-कर सघर्ष को बचाया। पुलिस पर इनका इस कदर प्रभाव रहा कि पुलिस

को भीड़ पर लाठी चलाने से हाथ रोक लेना पड़ा। पुलिस ने इन सेवाओं की सराहना की और जब ये अहमदाबाद चले जानेवाले थे, तब यहीं रहने के लिए प्रार्थना की।

इंदौर में मिल-मालिकों और मजदूरों के बीच हुए झगड़ों में कम-से-कम तीन बार हिंसा-काण्ड होते-होते बचाया।

सन् १९६१ के उत्तर प्रदेश के साम्प्रदायिक झगड़ों में आगरे के शान्ति-सैनिक सजग रहे और शहर में अशान्ति न होने देने में काफी सहयोग दिया। सन् १९६४ में बिहार और उड़ीसा में जब भयंकर हत्याकाण्ड हुआ, तब उसकी आँच खड़गपुर में भी पहुँची, लेकिन वहाँ के स्थानीय शान्ति-सैनिकों की सजगता के कारण कोई अवांछित या अनिष्ट घटना नहीं होने पायी।

कई अन्य प्रसंगों में विवाद को सुलझाने में उपवास का सहारा लेना पड़ा और वह सफल रहा। केरल में नावों के किराये को लेकर विवाद खड़ा हुआ था, तब वहाँ के उच्च श्रेणी के नेता श्री केलप्पन् ने उसके शान्ति-पूर्ण समाधान के लिए उपवास किया था। किराये में वृद्धि होने के कारण उसके विरोध में विद्यार्थी खड़े हो गये थे और भारी उपद्रव होनेवाला था। उड़ीसा में सरकार और विद्यार्थियों के बीच बड़ा विवाद खड़ा हुआ था, जो लगभग दो महीने तक चलता रहा। उसके शान्तिमय समाधान के लिए आचार्य हरिहर दास ने उपवास किया, जिससे विवाद शान्त हुआ। मद्रास में हिन्दी-विरोधी आन्दोलन के नियन्त्रण के लिए विनोबाजी को उपवास करना पड़ा था, यह सब जानते हैं।

विशाल और हिंसक उपद्रवों में शान्ति-सैनिकों ने सामान्यतया जनता को समझाने और हिंसा को रोकने का प्रयास किया है। आम तौर पर थोड़े-से स्थानीय सैनिक जितना कर सकते थे, उतना उन्होंने किया। सूचना मिलते ही बड़ी संख्या में बाहर से शान्ति-सैनिक फौरन यहाँ चले आये। लोगों को शान्त करने में, संशय के वातावरण को मिटाने में और बेघर लोगों को फिर से बसाने में इन लोगों ने बड़ा सराहनीय काम किया। इन्हें अच्छी सफलता मिली। असम में जब बंगला-विरोधी दंगे हुए, तब भी भारत

के कोने-कोने से शान्ति-सैनिक वहाँ गये थे। श्री जवाहरलालजी की माँग पर बाद में विनोबाजी भी असम पहुँचे और वहाँ के शान्ति-सैनिको का मार्गदर्शन किया।

सिंहभूम, राँची और सुन्दरगढ जिलो मे जब साम्प्रदायिक दगे हुए, तब बिहार और उडीसा के शान्ति सैनिक पीडित क्षेत्रो में बडी सख्या में गये। यहाँ भी उनका काम बडा सफल और प्रभावशाली रहा। दगे में भाग लेनेवालो मे कई लोगो को इन्होने समझाया, जिसके फलस्वरूप उन लोगो ने अपने दुष्कर्म के लिए पश्चात्ताप किया और जिनके घर जला दिये गये थे, उनके घर फिर से बाँधने में अपनी ओर से उन्होने मदद तक की।

सीतामढी (बिहार) में अल्पसख्यक जाति के लोगो के घर जल जाने के प्रश्न को लेकर साम्प्रदायिक हिंसा फूटी थी। लेकिन उसे आगे बढने से रोकने में शान्ति सैनिक सफल रहे। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के साम्प्रदायिक दगो में, मद्रास के हिन्दी-विरोधी उपद्रवो में तथा पजाब के पजाबी विरोधी दगो में भी शान्ति-सैनिको ने शान्ति-स्थापना का काम किया।

अनुभव से यह स्पष्ट होता है कि ऐसे उपद्रवो में बाहर के शान्ति-सैनिक समय पर पहुँच नही पाते हैं और उपद्रव को रोक नही पाते हैं, बल्कि स्थानीय शान्ति-सैनिक पर्याप्त सख्या में हो, तो उपद्रवो को न होने देने में वे सफल हो सकते है। यह तो स्पष्ट है कि विनोबाजी की कल्पना के अनुसार ५,००० लोगो के बीच कम-से-कम एक शान्ति सैनिक भी ठीक से काम करने लगे तो शान्ति बनाये रखने का वह एक अच्छा बल साबित हो सकता है।

शान्ति-सेना का एक और महत्त्वपूर्ण काम यह रहा है कि दीन-दलित लोगो को विविध दबाव और शोषण से बचाने में काफी योगदान दिया गया है। पूर्णिया (बिहार)और कोरापुट (उत्कल)क्षेत्रो में भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी को खतम करने में वे सफल हुए हैं। कोरापुट में दीन-हीन आदिवासियो में निर्भयता निर्माण करने में भी बडी सफलता मिली है।

पूना में खडकवासला बाँध के टूटने से बाढ़ आने पर, आन्ध्र में तूफान

के कारण तथा बिहार के बाढग्रस्त इलाके के उन प्राकृतिक सकटो के बीच भी शान्ति-सेना ने काफी परिश्रमपूर्वक काम किया है ।

शान्ति-सेवा दल

यह शान्ति-सेना की एक शाखा है । इसके लिए एक साधारण सकल्प लेना होता है । कोई भी स्वच्छा से यह सकल्प लेकर इस दल का सदस्य बन सकता है । इसका उद्देश्य ऐसे लोगो को इकट्ठा करना है, जो शान्ति-सैनिक की प्रतिज्ञा तो लेने में असमर्थ होगे, लेकिन शान्ति चाहते है और शान्ति-स्थापना के लिए कुछ-न-कुछ करना चाहते है ।

इसके दो भाग है । एक है किशोर-शान्तिदल, जिसमें १२ से १८ वर्ष तक के किशोर शामिल हो सकते हैं । और दूसरा तरुण-शान्तिदल है, जिसमें १८ से ३० वर्ष तक के युवक भाग ले सकते हैं । इस देश में इन दिनो कम ही उपद्रव ऐसे होते है, जिनमें किशोरो का हाथ न रहता हो । किशोर-शान्तिदल चाहता है कि किशोरो और युवको के विधायक सामाजिक दृष्टिकोण का विकास हो और उनकी शक्ति को सृजनात्मक तथा लाभदायी प्रवृत्तियो की ओर मोडा जा सके ।

सन् १९६४ से प्रतिवर्ष किशोर-शान्तिदल के वार्षिक शिविर आयोजित हो रहे है । ये शिविर काफी उपयोगी सिद्ध हुए हैं । इन शिविरो में भाग लेनेवाले कई युवक तथा युवतियाँ अपने-अपने क्षेत्र में दल की शाखाएँ खोल रहे हैं और उपयोगी कार्यक्रम चला रहे हैं ।

तरुण-शान्तिदल का यह प्रयत्न है कि देश में सगठित और समर्थ एक सेवा-शक्ति खडी की जाय, जो रचनात्मक प्रवृत्तियो और समाज-सेवा के काम में लगे । इन दोनो शाखाओ के द्वारा शान्ति-सेना देहात और शहर, दोनो क्षेत्रो में काम कर रही है । शहरो में तो शान्ति-सेना ही एकमात्र अत्यन्त प्रमुख सर्वोदयी कार्यक्रम है । अधिकतर सघर्ष, तनाव, दगे शुरू में शहरो में ही फूट पडते है । इसलिए जड में ही इनको रोकने का काम काफी महत्त्व का है ।

देहातो के लिए त्रिविध कार्यक्रम के एक अग के तौर पर शान्ति-सेना का महत्त्व अत्यधिक है। जहाँ ग्रामदान देश को खोखला बना देनेवाले आकस्मिक सघर्षों की जड को निर्मूल करने का प्रयत्न करता है, वहाँ जनता में ग्रामदान के तत्त्व और विचार को फैलाने का महत्त्वपूर्ण काम शान्ति-सेना को करना है। जो गाँव ग्रामदान में आ जाता है, वहाँ जो-जो काम करने है, उनमें भी एक बहुत प्रमुख काम यह है।

ग्रामदानी गाँवो में भी तनाव और सघर्ष होगे ही। गाँव गाँव के बीच भी सघर्ष हो सकते है। मुकदमेबाजी देहातो के लिए एक घातक अभिशाप है। उनका भाग्य इसी पर लटकता रहता है। इसके कारण शान्ति भग होती है। कई समाज विरोधी व्यवहार और अपराध-समस्याओ का भी देहातो को सामना करना पडता है। देहाती क्षेत्र के शान्ति-सैनिको और सेवको को इन समस्याओ से जूझना पडता है।

गणवेश

शान्ति-सैनिक जब कार्यरत होते है, तब अपेक्षा यह है कि वे सफेद वस्त्र पहने रहें और सिर पर खादी का पीला रूमाल बाँधें। रूमाल २४ इच चौडा, २४ इच लम्बा होना चाहिए, उसे त्रिकोणाकार मे मोडकर सिर पर लपेट लेना चाहिए।

शान्ति-सेवको को भी सफेद कुर्ता या कमीज पहनना चाहिए और शान्ति-सैनिको की ही तरह का खादी का पीला रूमाल अपने गले में, स्काउट ी तरह बाँधना चाहिए, सिर पर नही। साथ ही कमर पर खादी का पीला पट्टा भी बाँधना होगा। सीने की बायी ओर लगाने के लिए इनको एक बैज भी दिया जाता है।

सर्वोदय-पात्र

सर्वोदय-पात्र शान्ति-सेना के कार्यक्रमो का एक प्रमुख अग है। जो भी गृहस्थ इस कार्यक्रम का समर्थन करता है, उससे अपेक्षा यह है कि घर में एक पात्र निश्चित स्थान में रखे, और उसमें रोज एक मुट्ठी अनाज डालें।

यह शान्ति-सेना के काम के लिए उनकी सम्मति तथा सहायता के लिए है। विनोबाजी चाहते है कि यह अनाज घर के सबसे छोटे बच्चे की मुट्ठी से डलवाया जाय। इससे बच्चो में ठेठ बचपन से ही दूसरो के लिए देने की भावना अर्थात् समाज भावना निर्माण होने में मदद मिलती है।

इस समय आध्र और मद्रास के प्रमुख शहरो मे तथा कुछ अन्य क्षेत्रो में व्यवस्थित रूप से सर्वोदय-पात्र का सगठन और सचालन हो रहा है।

अन्य कार्यक्रम

सन् १९६२ मे हिन्द-चीन-सघर्ष के दिना में सर्व सेवा सघ ने एक प्रस्ताव स्वीकृत किया था। उसमें कहा गया है

"सीमावर्ती जनता में अहिंसक प्रतीकार की शक्ति बढाना हमारा एक प्रमुख काम है। शान्ति-सैनिको को चाहिए कि जहाँ-जहाँ सम्भव हो, वहाँ सब जगह लोगो को वे स्वावलम्बी बनायें और आक्रमण का सामना असहयोग के द्वारा करने की प्रेरणा दें। इसके लिए आवश्यकता पडने पर शान्ति-सैनिको को अपने प्राण छोडने को तैयार होना चाहिए और इस प्रकार दूसरा को भी वैसा करने की प्रेरणा देनी चाहिए।"

देश की भावात्मक एकता को सुदृढ करने तथा अहिंसक प्रतीकार की भावना जाग्रत करने के इस दोहरे काम में सहयोग देने के लिए सर्व सेवा सघ ने अहिंसा में विश्वास करनेवाले अन्यान्य व्यक्तिया और सस्थाआ को भी आमन्त्रित किया।

इस आमन्त्रण के फलस्वरूप इसी उद्देश्य के लिए देश की सभी प्रमुख सस्थाआ का प्रतिनिधित्व करनेवाली एक समन्वय-समिति का गठन किया गया। इस समिति के निर्देशन में सीमा-क्षेत्र के अन्दर कोई १२६ केन्द्र काम कर रहे हैं। ये निम्न प्रकार है

असम में ३८, उत्तराखण्ड में ३४, पूर्णिया में ३९, नेफा में ७, बगाल में ३, उत्तर पजाब में २, नागालैण्ड में २ और हिमाचल प्रदेश में १। बाद में तय किया गया कि पाकिस्तान की ओर की भारत की सीमा में भी इस प्रकार का काम चालू किया जाय। शान्ति-सेना इन कार्यों में लगी है।

सीमा-क्षेत्र के काम का प्रमुख उद्देश्य यह है

१ सीमावर्ती जनता में भारत के दूसरे भागो के साथ एकात्मता का विकास करना,

२ सीमा-क्षेत्र के लोगो की सैनिक तथा भौतिक प्रगति में सहायता देना,

३ आक्रमण का अहिंसक प्रतीकार करने की भावना निर्माण करना और

४ मैत्री की भावना निर्माण करना, जो सीमा के बाहरी इलाको में भी प्रभाव डाल सके ।

इन केन्द्रो में जो कुछ काम अब तक चला है, उससे काफी उत्साह मिलता है । यहाँ यह उल्लेख करना अनुचित न होगा कि नेफा में जो केन्द्र खोले गये हैं, वे स्व० जवाहरलाल नेहरू के सुझाव के आधार पर खोले गये और उस क्षेत्र में सेवा के लिए खोले गये सबसे पहले के केन्द्र ये ही है । उससे पहले तब यह नीति मानी गयी थी कि उन क्षेत्रो को भारत के दूसरे भागो से अछूता रखा जाय ।

दिल्ली-पेकिंग मैत्री-यात्रा

भारत और चीन के बीच मैत्री बढाने की दृष्टि से सन् १९६३ के मार्च में यह यात्रा हुई थी । भारतीय शान्ति सेना की ओर से 'वर्ल्ड पीस ब्रिगेड' से प्रार्थना की गयी थी कि वह इस यात्रा का सयोजन करे और तदनुसार इसका आयोजन हुआ था ।

यह सही है कि यात्रा का हेतु सिद्ध नही हो सका, क्योकि चीन-सरकार ने अपनी सीमा में प्रवेश करने की अनुमति नही दी । लेकिन भारत-सरकार ने अपने देश में एक अन्तर्राष्ट्रीय यात्री-टोली को इस हेतु से यात्रा करने की अनुमति देकर अपनी उदारता दरशायी । इस यात्रा के कारण देश में युद्ध-मानस को कुछ हद तक शीतल करने में सहायता मिली ।

नागालैण्ड-शान्ति मिशन

नागालैण्ड-शान्ति मिशन में श्री जयप्रकाश नारायण के होते हुए भी, उसमें शान्ति-सेना मण्डल का प्रत्यक्ष सम्बन्ध नही था। फिर भी शान्ति-सेना मण्डल वहाँ की समस्या के समाधान में काफी रुचि लेता रहा और उसने कोहिमा में अपना एक केन्द्र भी खोला है ।

शान्ति-सेना मण्डल मानता है कि नागा-प्रदेश भारत का अंग है, लेकिन मण्डल यह भी महसूस करता है कि इन विद्रोह के दिनो में नागा लोगो पर जो अत्याचार हुआ है, उसके कारण उन लोगो के मन में अत्यधिक कटुता पैदा हुई है । शान्ति मिशन के प्रयत्नो के फलस्वरूप कई वर्षों के बाद पहली बार वहाँ शान्ति स्थापित हो पायी । वहाँ के लोगो के लिए यह वरदान सिद्ध हुआ और इससे शान्तिपूर्ण समाधान का मार्ग खुल गया । ०

: ११ :

उपसंहार

पिछले अध्यायो मे ग्रामदान, खादी और शान्ति-सेना, इन तीनो कार्यक्रमो के विविध पहलुओ की चर्चा की गयी । लेकिन जैसे विनोबाजी कहते है, ये तीनो कार्यक्रम जबरदस्ती जोडे गये तीन भिन्न-भिन्न स्वतन्त्र कार्यक्रम नही है, बल्कि एक ही मूर्ति के तीन मुंह के समान एक ही कार्यक्रम के तीन अग है । उस मूर्ति की उपासना एक ही मूर्ति के रूप में करनी है, अलग-अलग मुंह की अलग-अलग उपासना नही ।

आज भारत, बल्कि सारा विश्व ही तीन प्रकार के रोगो से पीडित है । वे रोग है पूंजीवाद, नौकरशाही और सैनिकवाद । त्रिविध कार्यक्रम के ये तीनो अग उन तीनो रोगो के उपचार के प्रतीक है । ग्रामदान से विकेन्द्रित अर्थ-रचना और प्रशासन की नीव पडती है । और इस प्रकार नौकरशाही का इलाज प्रस्तुत होता है, खादी और ग्रामोद्योगो से पूंजीवाद समाप्त हो सकता है तथा शान्ति-सेना से पुलिस और सेना की आवश्यकता खतम हो जाती है ।

वे तीनो रोग यद्यपि भिन्न-भिन्न रोग दिखाई देते है, तथापि वस्तु-स्थिति यह है कि वे तीनो एक ही मूल रोग के तीन प्रकट लक्षण है । उसी प्रकार तीनो उपचार भी एक ही कारगर साधन के तीन पथ्य के रूप में है ।

लेकिन यह समय ग्रामदान-तूफान अभियान का है । बडी सख्या में ग्रामदान प्राप्त करने के लिए हजारो कार्यकर्ता प्रयत्नशील है । बाकी दोनो अगो की उपेक्षा हो रही है, ऐसा दिखाई देता है, लेकिन बात ऐसी नही है । विनोबाजी के ही शब्दो में कहना है, तो ग्रामदान एक ऐसी बुनियाद है, जिसके आधार पर खादी और शान्ति-सेना का निर्माण-कार्य किया जा

सकेगा और तब ग्राम-स्वराज्य का भवन खडा हो सकेगा। बुनियाद डालने का काम पहले होना चाहिए। इसलिए ग्रामदान पर जोर देने का यह अर्थ नही है कि बाकी दो की उपेक्षा की जाती है।

खादी-ग्रामोद्योगो का आयोजन और शान्ति-सेना का संगठन न करे, तो ग्रामदान का मूल हेतु सिद्ध ही नही होगा।

दूसरी ओर अनुभव यह आ रहा है कि खादी और ग्रामोद्योग वास्तव में तब तक प्रगति नही कर पाते है, जब तक गाँव-समाज खुद अपने हाथ में उन्हें न ले ले। आज देश के लगभग एक लाख गाँवो में खादी या ग्रामोद्योग का कुछ-न-कुछ काम चलता है। लेकिन ऐसे गाँव बहुत नही हैं, जहाँ ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में इनका प्रमुख स्थान रहा हो। केवल ग्रामदान की भावना इन प्रवृत्तियो को उनकी लक्ष्य-सिद्धि की ओर ले जा सकती है। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि जिन-जिन गाँवो में खादी-ग्रामोद्योग का कुछ काम चल रहा हो, उन गाँवो को ग्रामदान में शामिल करने का प्रयत्न किया जाय।

देश की ज्वलन्त समस्या का हल करने का प्रयत्न ग्रामदान से हो रहा है। इसलिए ग्रामदान का सन्देश फैलाने में लगे हुए हजारो कार्यकर्ता और ग्रामवासी वस्तुतः शान्ति-सैनिक का ही काम कर रहे है, भले ही शान्ति-सैनिक के रूप में उन्होंने अपना नाम दर्ज न कराया हो। एक बार एक गाँव या क्षेत्र ग्रामदान हो जाता है तो फिर वहाँ शान्ति-सेना संगठित करना आसान हो जाता है, उसके लिए जनता की भारी सहमति मिल जाती है।

तिस पर भी देश में जो एकता का अभाव है, साम्प्रदायिकता है, संकीर्ण मनोवृत्ति है और स्वार्थपरता है, इन सबके कारण ग्रामदान के खिलाफ बडा विरोध और प्रतिरोध खडा हो सकता है। उनका मुकाबला और ग्रामदान-भावना का बचाव करने का निरन्तर प्रयास करते रहना होगा। शान्ति-सेना और शान्ति-सेवा दल ऐसी एक अहिंसक शक्ति होगी, जो प्रतिक्रियाओं से ग्रामदान को बचाती रहेगी और आदर्श की ज्योति को प्रज्वलित रखेगी।

इस प्रकार आन्दोलन के ये तीनो अंग एक-दूसरे में ओतप्रोत हैं और अविभाज्य हैं। ये अपने में बाकी सभी रचनात्मक प्रवृत्तियो का आधार बनानेवाले हैं। श्री जयप्रकाशजी के शब्दो में उपमा देनी हो, तो ग्राम-स्वराज्य की तुलना बैलगाडी से की जा सकती है। ग्रामदान बैलो के समान गाडी की चालक शक्ति का काम करता है। शान्ति-सेना और खादी, दो पहिये के समान हैं। बाकी सब रचनात्मक कार्य गाडी में भरने का सामान है।

बैल न हो, तो गाडी चल ही नही सकती। ग्राम स्वराज्य की भी यही बात है। इसीलिए विनोबाजी ग्रामदान के रूप में चालक शक्ति निर्माण करने पर जोर देते हैं।

देश की आज की आर्थिक परिस्थिति और आतरिक सघर्ष के कारण बडी विपत्ति आनेवाली है। विनोबाजी बराबर चेतावनी दे रहे हैं कि एक-मात्र ग्रामदान से ही देश खूनी क्रान्ति से बच सकेगा। इसकी तीव्रता की उत्कट अनुभूति से वे आज प्रेरित हो रहे हैं और हृदय से देश का तथा विश्व का कल्याण चाहनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को उस तीव्रता का अनुभव होना चाहिए।

●

परिशिष्ट : १

भूदान-प्राप्ति तथा वितरण के प्रान्तवार आँकड़े

(मार्च '६६ तक)

प्रान्त	जिलों की संख्या	भूमि प्राप्ति (एकड़ में)	भूमि वितरण (एकड़ में)	वितरण के अयोग्य खारिज भूमि (एकड़ में)	वितरण के योग्य शेष भूमि (एकड़ में)
असम	१९	११,९३५	२६५		११,६७०
आंध्र	२०	२,४२,९५२	१,०३,३०८	८६,३८५	५३,२५९
उड़ीसा	१३	१,७३,८७२	१,०३,४१६	१५,२२२	५५,२३४
उत्तर प्रदेश	५४	४,३४,३५१	१,८४,२७४	१,३७,१२७	१,१२,९५०
केरल	९	२६,२९३	५,७७४	७,९९९	१२,५२०
तमिलनाड	१३	८०,४३३	२१,५१९	—	५८,९१४
दिल्ली	१	३००	१८०	१२०	—
पजाब	१८	१४,७३९	३,६०१	३,३८०	७,७५८
गुजरात	१८	१,०३,२४२	५२,०८०	२७,९९४	२३,१६८
महाराष्ट्र	२५	१,५०,८०२	१,०७,१११	३८,३४३	५,३४५
मध्यप्रदेश	४३	४,०५,४०२	१,५६,५०६	१,७४,५३१	७४,३६५
मैसूर	१९	२०,०८६	३,१८१	५३	१६,८५२
बंगाल	१७	१२,९१८	३,८५६	८,४२६	६३६
बिहार	१७	२१,३२,७८७	३,११,०३७	१०,७९,७०१	७,४२,०४९
राजस्थान	२६	४,२९,४२८	९२,७३४	१,११,७५७	२,२४,९३७
हिमाचल	६	५,२४०	२,५३१	—	२,७०९
जम्मू-कश्मीर	१५	२११	५	—	२०६
	३३३	४२,४४,९९१	११,५१,३७८	१६,९१,०४१	१४,०२,५७२

परिशिष्ट : २

भारत में प्रान्तवार ग्रामदान

(३० सितम्बर १९६६ तक)

प्रान्त	तूफान के पहले के ग्रामदान मई '६५ तक	तूफान के बाद बलिया सम्मेलन, अप्रैल '६६	कुल ग्रामदान ३० सितम्बर '६६ तक
१. बिहार	३५०	५,४६२	१०,७८३
२. उड़ीसा	२,४६९	२,२५१	५,२०५
३ मद्रास	३२५	६३८	१,८६७
४. मध्यप्रदेश	१८४	८७८	१,६२८
५ महाराष्ट्र	९१५	७५५	२,०५७
६ राजस्थान	३७८	४५६	९७०
७ गुजरात	२००	११४	४१६
८ आन्ध्र	५९५	४९०	२,१५२
९. प० बगाल	३५४	२२८	५४२
१० असम	९५७	—	१,२८६
११. पजाब	६	—	४९१
१२. उत्तर प्रदेश	१२३	१८४	३६३
१३ हिमाचल प्रदेश	४	१३	१७
१४. केरल	४०३	६	४०९
१५ मैसूर	५८	—	५८
	७,३२१	११,६०९	२८,२४४

भारत में प्रखण्ड-दान

(२५ अक्तूबर '६६ तक)

प्रान्त	कुल	जिला	प्रखण्ड-दान
बिहार	२३	हजारीबाग	१. प्रतापपुर
		पूर्णिया	२. पूर्णिया—सदर पूर्व
		दरभंगा	३. सरायरजन ४. वारिसनगर ५. उजियारपुर ६. समस्तीपुर ७ ताजपुर ८. झझारपुर ९ कल्याणपुर
		भागलपुर	१० बिहपुर ११. गोपालपुर १२. नवगछिया
		मुंगेर	१३. गोगरी १४. साहेबपुर कमाल १५. बलिया
		पलामू	१६. गारू १७ मनिका
		मुजफ्फरपुर	१८. मुरौल
		सारन	१९ माँझी
		सहर्षा	२०. निर्मली
		सथाल परगना	२१. सुन्दर पहाडी
		शाहाबाद	२२ अघौरा
मद्रास	१३	तिरुनेलवेली	२३. राधापुरम् २४. नागुनेरी २५ वल्लियूर २६. कलक्कड २७ करन्गुलम् २८. पलायनकोट्टई २९. विलयकुलम् ३०. कयायर
		मदुराई	३१. नत्तम् ३२. उत्तर मेलूर ३३. दक्षिण मेलूर ३४ अतनारपट्टी ३५. वडमदुराई
महाराष्ट्र	७	ठाणा	३६. कोसा ३७. सँवान ३८. तलासरी ३९. मोखाडा ४०. जवाहर विकासगढ ४१. मनोर

	चादा	४२. सिरोचा
मध्यप्रदेश ४	प० निमाड	४३. निवाली ४४. सेंधवा
	सिवनी	४५. कुरोई
	टीकमगढ	४६. टीकमगढ
उड़ीसा १३	कोरापुट	४७. नारायणपटना ४८. बन्धुगाँव ४९. दशमन्तपुर ५०. लक्ष्मीपुर ५१ रायगडा ५२. उमरकोट ५३. दाबूगाँव ५४. झरिगा
	मयूरभज	५५. रासगोविन्दपुर ५६ मोरोडा ५७. बागरी पोसी (प्र०) ५८. बागरी पोसी (द्वि०)
	ढेंकानाल	५९ कनकादहद
पंजाब ३	रोहतक	६० मुड़लाना ६१. कथूर
	कागडा	६२. प्रागपुर
आंध्र २	महबूबतगर	६३. अचमपेट ६४. कलुआकुर्ती
गुजरात १	बडोदा	६५. बोरियाद

भारत में तालुका-दान

(२५ अक्तूबर '६६ तक)

प्रान्त	जिला	तालुका
मद्रास	मदुराई	१. मेलूर
	तिरुनेलवेली	२. नागुनेरी
महाराष्ट्र	ठाणा	१. तलासरी
		२. मोखाडा

शान्ति-सेना समितियों के संयोजक

१	असम	श्री तरुण बरुआ, गोहाटी
२	बगाल	श्री कृष्णकान्त चक्रवर्ती, कलकत्ता १२
३	बम्बई	श्री लालू शाह, गाँवदेवी, बम्बई ७
४	गुजरात	श्री जगदीश लखिया, बडौदा-१
५	केरल	श्री के० दामोदरन्, त्रिचूर
६	महाराष्ट्र	श्री मोतीलाल मत्री, बीड
७	मध्यप्रदेश	श्री चतुर्भुज पाठक, छतरपुर
८	पजाब	श्री दादा गनेशीलाल, रेवाडी (गुडगाँव)
९	उत्तर प्रदेश	श्री विनय अवस्थी, कानपुर
१०	राजस्थान	श्री बद्रीप्रसाद स्वामी, जयपुर
११	उत्कल	श्री रतनदास, राउरकेला (उडीसा)

भारत में शान्ति-सैनिक और शान्ति-केन्द्र

(अगस्त '६६ तक)

क्रम	प्रान्त	शान्ति-सैनिक	शान्ति-केन्द्र
१.	बिहार	४,४७३	३४६
२.	उत्तर प्रदेश	२,६४१	१०५
३.	महाराष्ट्र	१,८७१	३००
४	राजस्थान	६९९	८४
५	मध्यप्रदेश	६१३	४१
६.	पंजाब	४०२	७
७	असम	३८०	८०
८.	बंगाल	२५२	१४
९.	उत्कल	२१५	३६
१०.	दिल्ली	१९५	—
११.	आंध्र	१७२	१
१२	गुजरात	१००	८
१३	केरल	६६	१९
१४	तमिलनाड	५९	४५
१५	मैसूर	१७०*	१२
१६	हिमाचल प्रदेश	७०*	१२
१७	नागालैण्ड	—	२
१८.	नेफा	—	६
		१२,१६७	१,११८

* ये आँकड़े अधूरे हैं ।